समर्पण

महाराजाधिराज श्री रमेशसिंहजी बहादुर नरेश दरभंगा ।

श्रीहरि

सदाचार ग्रन्थ मालान्तर्गत

सदाचारदर्शन

अर्थात्

(सौ वर्ष जीवनका उपाय)

स्कूल पाठशाला और सर्व साधारणमें प्रचारके लिए पंजाब
गवर्न्मेन्ट युनीवर्सिटी " शास्त्री "

पं० रामनारायण शर्मा गौड़,
नारनौल दोचाना निवासी द्वारा संगृहीत

बम्बई ।

संवत् १९७७

प्रकाशक,
पं० रामनारायण शास्त्री, अदीतवार पेठ, जूनी अस्पताल
मु० नासिक सिटी.

मुद्रकः—
रा. चिंतामण सखाराम देवळे, मुंबईवैभव प्रेस, सर्व्हंट्स्
ऑफ इंडिया सोसायटीज् होम, सँढर्स्टरोड, गिरगांव-मुंबई.

विषयसूची ।

नित्यपाठ योग्य श्लोक

अयं गुणानां षट्त्रिंशत् षट्त्रिंशद्गुणसंयुतः
यान् गुणाँस्तु गुणोपेतः कुर्वन् गुणमवाप्नुयात् १

चरेद्धर्मानकटुकः मुञ्चेत्स्नेहं न चास्तिकः
अनृशंसश्चरेदर्थान् चरेत्काममनुद्धतः २

प्रियं ब्रूयादकृपणः शूरः स्यादविकत्थनः
दाता नापात्रवर्षीस्यात् प्रगल्भः स्यादनिष्ठुरः ३

संदधीत न चानार्यैर्विगृह्णीयान्न बन्धुभिः
नाभक्तं चारयेच्चारं कुर्यात्कार्यमपीडया ४

अर्थं ब्रूयान्नचासत्सु गुणान् ब्रूयान्नचात्मनः
आदद्यान्नच साधुभ्यो नासत्पुरुषमाश्रयेत् ५

नापरीक्ष्य नयेद्दण्डं नच मन्त्रं प्रकाशयेत्
विसृजेन्नच लुब्धेभ्यो विश्वसेन्नापकारिषु ६

अनीर्षुर्गुप्तदारः स्याच्चोक्षः स्यादघृणिर्नृपः
स्त्रियः सेवेत नात्यर्थं मृष्टं भुञ्जीत नाहितम् ७

अस्तब्धः पूजयेन्मान्यान् गुरून्सेवेदमायया
अर्चेद्देवानदम्भेन श्रियमिच्छेदकुत्सिताम् ८

सेवेत प्रणयं हित्वा दक्षः स्यान्नत्वकालवित्
सान्त्वयेन्नच मोक्षाय अनुगृह्णन्नचाक्षिपेत् ९

प्रहरेन्नत्व विज्ञाय हत्वाशत्रून्न शोचयेत्
क्रोधं कुर्यान्नचाऽकस्मान्मृदुः स्यान्नापकारिषु १०

इति सर्वगुणोपेतान् यथोक्तान् योऽनुवर्तते
अनुभूयेह भद्राणि प्रेत्य स्वर्गे महीयते । ११

इति श्रीमन्महाभारते शान्तिपर्वणि राजधर्मे २७० अध्यायः

श्रीः

ग्रन्थकारका वक्तव्य

सहृदय हृदयाः !

कर्मभूमि भारतमें जिस समय आर्यजाति सदाचारके अनुसार कर्मपरायण थी, उसका प्रत्येकवर्ग सत्य, शील, क्षमता, सहिष्णुता, आस्तिकता, उदारता, ब्रह्मचर्य, भूतदया, आदि योग्यता संपादक दिव्य गुणोंके शिक्षाऽनुष्ठानसे शतायु और शतवीर्य होकर सुख शान्तिके साथ जीवन व्यतीत किया करता था। चारित्र धवल भारतके पवित्र पीठपर न कभी किसीको दुर्भिक्ष, महर्घता, लुटेरे, मित्रद्रोही, विश्वासघाती, आदिका भय होने पाता था, और न अकाल प्राणहारिणी, लोकसंहारिणी महामारियोंके वक्र चक्रमें पड़कर चकना चूर ही होना पड़ता था। आर्यधर्मके अति प्रखर नीतिप्रकाशमें शारीरक मानसिक शक्तिसम्पन्न सर्व जनसमाज, हिंसा, मद्यपान, लम्पटता, आदि दुर्व्यसन दोषोंसे अलिप्त रहकर अपनी मर्यादा पर शैलराज हिमालयकी तरह सदा धैर्यशील बना रहता था।

उद्योग साध्य है बल वैभवका बढ़ना
अति कठिन नहीं है अनेक भाषा पढ़ना

है और बात जो बड़े बड़े पद पाना
आश्चर्य नहीं साम्राज्य तिलक मिल जाना
दरजा है जिसका राजा रङ्क समाना
है मनुज देहमें कठिन योग्यता आना

आदि संगीतोंकी प्रतिध्वनिसे जिस प्रकार भारतवर्षका विशाल आकाश, रात्रि दिवा गूंजता रहता था, एवं मङ्गल मूल प्रभात कालमें ग्राम नगरोंके शुक शारिका आदि

रहो सर्वदा प्रेमके बीज बोते
सदा सर्वको एकतामें पिरोते
दुराचार वेतालका शीस फोड़ो
उठो जल्द उत्कर्षकी राह दौड़ो

आदि भावोत्पादक भुजङ्ग गीतियां गा गा कर लोकसंग्रह किया करती थी।

परम आप्त भारतके पूर्वनेताओंने जनसमाजमें सदाचारके जिससे लोक परलोक सापेक्ष नीतिको अवतारित किया है। उनका कथन कि आत्मा उत्तम कर्मोंसे उत्तम फल प्राप्त करता है, और ...चरणोंसे पापलोकोंमें जाता है, आदि बहुमतसे संसारके किस धर्मग्रन्थको मान्य नहीं है? वह जैसे सत्यत्वकी भावनासे सत्य फलदायक होता था, एवं समाजको चरित्रशील बनानेके कार्यमें भी विशेष सहायता करता था। जरा, मरण, इष्टवियोग, अनिष्टसहवास, आदि नाना सांसारिक ताप रोगोंसे संतप्त मनुष्य

प्राणीके मनको पारलौकिक कर्मश्रद्धासे सान्त्वना प्राप्त होती है। समस्त जीव राशिके साथ भ्रातृभावकी: भावनाके सिवा जन्मान्तरमें होनेवाले कर्म विपाककी चिन्तासे वह एकाएक इस लोकमें चारित्र भ्रष्ट भी नहीं होने पाता। निकृष्ट श्रेणिका जन समाज जैसे राजकीय उग्रशासनके भयसे लोकमें स्वेच्छाचारतासे काम नहीं ले सकता। एवं प्रकृत्या गम्भीर, किंवा स्वभावत उदार स्त्री पुरुष, पारलौकिक धर्मशासनको मान दे कर स्वेच्छाचारतासे काम नहीं लेते। इसीसे अर्थ, काम लौकिक, और धर्म, मोक्ष अलौकिक, यौं सदाचार क्षेत्रमें मनुष्यप्राणीके लिए चार महा पुरुषार्थोंकी स्थापनाकी गयी है। यदि अर्थ, काम दोही महापुरुषार्थ मान लिये जाते तो सदाचार कोई पृथक् वस्तु न होता। बनता वैसे सर्व मनुष्य अर्थ काम ही की उपासना करते। न कोई चौर्य, हिंसा आदिको अधर्म माननेका दावा करता, और न सामाजिक अन्य नियमों ही को किसी अंशमें आदर देता। यदि च केवल धर्म, मोक्षकी स्थापनाकी जाती, आसुरी सम्पत्तिका प्राणी समूह दैवी सृष्टिको अपना आहार बना लेता। तस्मात् पुरुषार्थ चतुष्टयको अन्योऽन्याश्रयकी शृङ्खलामें जकड़ कर बिना परस्पर विरोधके प्रत्येकको संपन्न करनेकी आज्ञा सदाचार शास्त्रने हर एक मनुष्यके लिए दी है।

कतिपय चार्वाकचञ्चु जड़वादका पक्ष लेकर ची ची कूची किया करते हैं कि भारतके धर्माचार्योंने परलोक पुनर्जन्म आदिकी

व्यवस्था देकर समाजको मुर्दा बना दिया इत्यादि। परंतु वे थोड़ेसे अगाड़ी बढ़कर यों नहीं सोचते कि वास्तवमें परलोक पुनर्जन्म आदिकी व्यवस्थाको न माननेवाले देहात्मवादी ही संसारके शत्रु हैं। परलोक पुनर्जन्म सम्बन्धी शिक्षाके अभावमें सर्व जगत्की वही दशा होती जो एक दूसरेको खा खा कर जीनेवाले सामुद्रिक जल जन्तुओंकी आपसमें होती है। यदि यह जगत् स्वभावसिद्ध होता तो स्वभाव सिद्ध ही इसकी सर्व व्यवस्था होती। ऐसी स्थितिमें ग्राम, नगर आदिकी रचना, समाजघटना, राज्यनिर्माण, आदि सर्व सुधारचेष्टा स्वभाववादमें व्यर्थ होती। और घोर अन्धकारमें पड़े रहना ही संसारका स्वाभाविक धर्म होता। किन्तु जब किसी नित्य, शुद्ध, चेतन देवताको सृष्टिका नियन्ता मान लेते हैं, तब सोपानारोह क्रमसे उन्नतिका विकाश भी उचित समझ लिया जाता है। अस्तु

निषिद्धके त्याग और विहितके अनुष्ठानमें यहांकी सर्व जातियां सदा सर्वतोभावसे तत्पर रहा करती थी। कभी उन्हें सोते हुए सूर्योदय नहीं होने पाता था। कोई अपने आप्तवर्गकी परम्पराप्राप्त मर्यादाको उल्लङ्घन करनेका साहस नहीं करता था। ब्राह्मणसे चण्डालपर्यन्त सर्वजाति जैसे भिन्न भिन्न उद्योग धन्धोंको अपना स्वाभाविक धर्म मानती थी, एवं

स्वधर्मो निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।

के सिद्धान्त पथपर आरूढ़ प्रत्येक जातिको स्वधर्मानुसार प्रपञ्च

चलाते अपनी हीनस्थिति उतनी नहीं अखरती थी, जितनी परधर्मसे प्राप्त हुई प्रभुता अखरती थी । यों सरलतासे आजीविका-सम्बन्धी प्रश्नके हल हो जानेपर जातिभेद रहते हुए भी आपसमें मनमुटावका किसीको कोई कारण नहीं सूझता था। वरन् हिन्दुत्वके नातेसे समस्त जातियां अपनेको एक धर्मकी छत्रछायाके नीचे आवास करती एक ही समझा करती थी।

दोहा—आर्यता न धनमें वसत, रहत न गुणि गण संग।
शुद्ध बुद्ध वर्तावके, रहत आर्यता अङ्ग।

भगवान् श्रीकृष्णकी इस उक्तिके[1] अनुसार मनुष्यमात्रके लिए योग्यता प्राप्त करनेका द्वार खुला रहता था। जिन खानदानोंमें अभक्ष्यभक्षण, अपेयपान आदि दुराचारोंकी निन्दित रूढ़ियां प्रचलित नहीं थी, कदापि उनकी संतानोंमें उनका प्रचार नहीं होने पाता था। जब कोई किसीको अन्यायका उपदेश करता सुननेवाला आकाशकी ओर उंगली उठाकर कहता रामसे डरकर चलना चाहिये। थोड़ेसे जीनेके लिए अन्याय करना मनुष्यकी भारी भूल है। इत्यादि।

ऐसी परिस्थितिमें अनेक शताब्दियों तक इस देशमें ऐसा राम-राज्य था कि जो चीज जहां डाल दी जाती, वर्षों तक वहीं पड़ी रहती थी। डालनेवालेके सिवा उसका कोई उठानेवाला नहीं

---

[1] वृत्तेन हि भवत्यार्यो न धनेन न विद्यया। महाभा. उद्योगे—कृष्ण दुर्योधन संवादे।

मिलता था। सच्चरित्र प्रजामें सर्वत्र शादगी और सरलता लोचन गोचर हुआ करती थी। लोग जैसे सर्वसाधारण स्त्रियोंके साथ मा, बहिन, बेटी और पुरुषोंके साथ काका, बाबा, भाई, बेटा आदि शब्दोंसे व्यवहार करते, एवं गौको माता, मातापिता आदिको ईश्वरांश और ज्ञान वृद्ध पुरुषोंको दिव्य विभूतिकी भावनासे देखा करते थे। तथा स्त्रियां मन, क्रम, वचनसे पतिकी आज्ञामें रहना अपना प्रधानधर्म माना करती थी। शालिग्राम, गङ्गाजली आदि उठानेके भयसे न्यायालयोंमें झूंठी साक्षी देना, मिथ्या शपथ खाना आदि अनीतियोंको कोई भूलकर भी स्वीकार नहीं करता था। ग्राम नगरोंमें सर्वत्र पञ्च पंचायतियां नियत रहा करती थी। जब कहीं कोई विरोधका अङ्कुर उत्पन्न होता, परमेश्वरकी मध्यस्थता स्वीकार कर पड़ोसके लोग उसको तत्काल मिटा दिया करते थे। भारतकी जातियां पापाचरणोंको म्लेच्छाचरण कहा करती थी। जब किसीसे कोई अकार्य बन आता, तुर्त उसका प्रायश्चित्त करता था। जैसे "शापादपि शरदपि" ब्राह्मण जाति अपने अलौकिकत्याग और आत्मसामर्थ्यसे भूदेव पदपर प्रतिष्ठित थी, एवं अत्याचारियोंकी मुण्डमालाओंको निशाना बनानेके लिए धर्मवीर क्षत्रिय संतान हमेशा उद्यत कार्मुक बनी रहती थी। यौं ही धन कुबेरके पदतक पहुंचनेपर भी भारतका धानिक वर्ग, अपनी कष्टोपार्जित श्रीको मिथ्या नामवरी विलासप्रियता आदिकी आरतीमें कर्पूर गौरंकी तरह न उड़ाकर ईश्वरीय देनगी इस नातेसे विश्वहितकारी धर्म कार्योंमें लगाना उसका उद्देश

माना करता था। और तदनुसार श्रेष्ठ, महाजन आदि पदवियोंसे वह संबोधन किया जाता था।

वर्तमान वैज्ञानिक जमानेकी उस सीधे शादे सदाचारी समयके साथ इसलिए क्षमता नहीं की जा सकती कि, उस समयकी सदाचार मूलक शिक्षा जिसप्रकार समाजका धारण करती थी वैसी इस २० वीं शताब्दीकी विज्ञानमूलक शिक्षा कर नहीं रही है। तभी तो जितना विश्वास उस समयके अपढ मनुष्यों पर कर लोग जिस प्रकार निश्चिन्त हो रहते थे उतना इस जमानेके पढ़े लिखे कानूनदाओंपर भी नहीं किया जाता है। और जिन अंशोंमें किया जाता है अनेक भोलेभंडारी दिशाभ्रमके फेरमें पड़कर पछताते हैं। शिक्षाका मौलिक उद्देश पात्रता प्राप्त करना है। यदि वर्तमान शिक्षामें पात्रता प्राप्त करानेका सामर्थ्य होता तो विज्ञानकी आड़में जो आज रोमाञ्चकारी दुराचारोंकी वृद्धि होती जा रही है वह कदापि न होती। यह बात इस सन् १९१४ के विश्वव्यापी महासंग्रामसे फूटे हुए विषभाण्ड सहस्रोंने प्रत्यक्ष कर दिखाया है। जितने ही लोग विद्याविवेक आदिके अभिमानमें विशेष रूपसे उन्मत्त हो रहे थे, उतना ही उन्होंने निरपराध प्रजाका सर्व नाश करनेमें विशेष रूपसे भाग लिया। और संसारके दुर्भाग्यसे अब तक उस विद्याधनका दुरुपयोग वैसी ही पैशाचिक तृष्णाके लिए किया जा रहा है। शिवाजीके समयका संताजी, विन्ध्यशायी अमरसिंह, और राज-

स्थानके डौंगजी जुहारजी आदि जिस भारतके चोर लुटेरे आदि भी अपने हाथोंमें आयी हुई सोनेकी चिड़ियाओंको

गाय रे ! गाय रे !! गाय रे !!!

की पुकार सुनकर " अभय मस्तु " कहते हुए छोड़ दिया करते थे, वहां आज महाकुलीन गोपालभक्तोंके सदाचारी कुलोंमें म्लेच्छनशील शिक्षावाटरमें तर वतर ऐसी ऐसी संताने निपटेनी लगी हैं जो सौ सौ वार मत्था मारने पर भी गाय माने साधारण पशु, और माता पिता माने साधारण मनुष्यके सिवा उनमें कुछभी विशेषता नहीं देखते हैं । जब वर्तमान शिक्षा यौं पारलौकिक सिद्धान्तोंके विरुद्ध फल प्रकट करती है तब जगत्को विज्ञानके पड़देमें नास्तिक और चरित्रभ्रष्ट बनानेके सिवा वह क्या उपकार कर सकती है;

शिक्षाकी सरारतमे सराबको उड़ाते हैं
पागलसे बनकर फिर मिट्टीभी खाते हैं
पैशाचिक पार्ट लेकर, रातिको बिताते हैं
दिनमें उदारदलके नेता कहलाते हैं
शिक्षितसमाजने लगाम जब उठायी है
आजकल ढकोसलोंकी खूब बन आयी है ।
चांदी निकलसकी बांदी बन बैठी है
सोनेको देख मति पीतलकी ऐंठी है ।

मुक्ता फल फलते हैं जहरीले आकमें
सचोटीके कांटेकों धर दो अब ताकमें

रुचिधर्मके उपासक सुधारकवृन्दारकगण बड़ी बड़ी सभा परिषदोंमे आकाश वाणी सुनाया करते हैं कि "जो जो शक्य हो सो सो किया जाय" परंतु जब आरोग्यकी रक्षाके लिए हम उन्हें भी पथ्याऽपथ्यका आश्रय लेते देखते हैं तब समाजको बुरायियोंसे बचानेके लिए नियतकी गयी आचार मर्यादा व्यर्थ है ऐसा कोई भी कह नहीं सकता ! अस्तु ।

भारत वर्षकी इस उदात्त चर्याको न केवल पौराणिक प्रमाणही पुष्ट करते हैं। हेन कांग नामका इतिहास प्रसिद्ध चीनी यात्री आजसे १९०० वर्ष पूर्व खुश्की रास्तेसे भारतमें भ्रमणकर इसे अपनी सुवर्णवर्णा लेखनीसे लिख गया है । और प्रसिद्ध अंग्रेज मिस्टर टाड़ साहबने इतिहास राज स्थानमें दोहराया है।

सारांश यह कि जब धर्मानुसार रुचि उत्पन्न करनेकी पृथा देशमें प्रचलित थी प्रायः सर्व लोग धर्माभिमानी हुआ करते थे। वे जैसे धर्म सम्मत कार्योंके करनेमें आगा पीछा नहीं सोचते एवं अधर्माचरणमें कभी प्रवृत्त नहीं होते थे। ऐसी परिस्थितिमें ओरसे छोर तक सर्वत्र आनन्द सिन्धुकी लहरियां लहराया करती थी । न "मूषकाः सलभाः शुकाः" की कहीं चर्चा सुनायी देती थी और न किसीको वैद्य तपस्वी आदिका गृहोंमें काम पड़ता था । घर

घरमें पुत्र पौत्र युक्त गृहस्थ, और सौभाग्यवती ललनाएं दृष्टि गोचर हुआ करती थी।

वन्द्यभारत उस समयका, विश्वमें सरनाम था।
कृपण जन जिसमें न थातो, चोरका क्या काम था।
मद्यपायीका ठिकाना, था नहीं इस देशमें।
कौन स्वेच्छा चारियोंके, घूमताथा वेशमें?
गूंजते थे आस्तिकोंके, गगन स्वाहाकारसे।
हृदय मंदिर सज रहे थे, ज्ञानके संचारसे।

परंतु जबसे वह सिद्ध पृथा नष्ट हुई, और आक्रमण कारियोंने दूसरोंके जीवनीय धर्मोपर आक्रमण करना शुरू किया कि असंतोष नामा अनन्त सहस्त्र मुखका रावण उत्पन्न हुआ जिसने प्रजामें एकदम अनाचारको सुरसा वदन बढ़ानेका मौका दे दिया। आजकी संकटावस्थाकी ओर देखकर कह सकते हैं कि यदि अष्टावक्र अभिमन्यु, अश्वत्थामा, चाणक्य, आदिके सिद्धान्तानुसार भारतका एकीकरण किया जाता, यदि रामकृष्ण आदि अवतारी पुरुषोंकी सामयिक युक्तियोंका समाजमें पद्धति सिर प्रचार किया जाता तो भारतहीमें भारत धर्मकी "**टके सेर भाजी टके सेर खाजा**" वाली दशा कदापि न होती। परंतु जब वैसा नहीं हुआ और आज वह महाजाति अपने महा लक्ष्यसे गिर गयी, उसकी अवस्था दुध मुहे बालक किसी हो गयी है। वैसे तो अनेक शताब्दियोंसे हमारे जातीय नियम नष्ट होते आ रहे हैं। फिर भी वे भाव नष्ट

नहीं हुए थे जिन पर जातिका अस्तित्व अवलम्बित रहता था। कहना न होगा कि इस २० वीं शताब्दीने हिन्दुओंके हिन्दुत्वको आमूलाग्र हिला दिया है। जागृति, जागृतिके हल्लेके साथ स्वेच्छे-चारताकी वह भयंकर बला आर्य जातिके सर्वस्वको निगल जानेका मुहूर्त देख रही है जिसकी लम्बोदरी पाप प्रतिमाकी ओर देखते न पितामें पुत्रके भाव ठहरते हैं और न स्त्रियोंमें पतिधर्म समझनेका साहस रह जाता है। यम, नियम, देवार्चन, शान्तिपाठ, भूतबलि, आदिका उपदेश करनेवालोंको आजकी बाबू दुनियां "५००० वर्ष पहलेका मुर्दा बोल उठा" की उपाधि देनेके लिए तयार हो जाती है। हॅट, कोट, बुट, सूट साबू सेंट आइल फिनाइल चाह काफी लवंडर पाउडर सोड़ा, बिस्कुट, आदिके विचित्र ढांचेमें ढली हुई नयी फॅसन, नयी रोसन, आज बड़े वेगसे हिन्दू समाजका काया पलट करनेमें लग रही है। देश वासियोंके व्यामोहसे देशी धूप दीप, देशी दवा दारू, देशी वेश भाषा, किंबहुना समस्त देशी व्यवहारविधि आज खरे देशाभिमानके संनाटेमें लोगोंको असभ्यताकी सामग्री दिखायी देती है। और जर्मन, फ्रांस, जापान, अमेरिका आदिकी बाहरी सफाई पर लट्टू हो देशकी प्रमुख जनता समाजमें बाह्याचार फैलानेके लिए महाप्रयत्न कर रही है। बाह्याचारोंके साथ ही साथ मानसिक आचारों पर भी उत्क्रान्ति बाद जारी है। तभी तो 'पटेलबिल' जैसे समाज विध्वंसकारी बिल रह रहकर समाजके सामने आते हैं। तात्पर्य यह है कि त्याग और अधीनताको आज कोई नहीं

चाहता । स्वार्थ और स्वेच्छाचारताकी खटपटोंमें तमाम जगत् लटपटा रहा है । ऐसी स्थितिमें जैसे जैसे दुराचारी, देहत्मवादी मनुष्योंकी संख्या अधिक होती जा रही है, ज्वर, क्षय, काश, श्वास, आतस, प्रमेह, सुस्ती; कमजोरी आदि नाना पाप रोगोंकी वृद्धि होती जा रही है। यौं जब रोगियोंकी वृद्धिके साथ डाक्टरोंकी वृद्धि, और डाक्टरोंकी वृद्धिके साथ हास्पिटलोंकी वृद्धि होती जा रही है, अन्धबुद्धि लोगोंको देश उन्नति करता दिखायी देता है । आश्चर्य ।

कुछ दिनसे देशमें स्वदेशी स्वदेशीकी ध्वनि सुनायी देने लगी है । परंतु समाजकी अन्तर्घटनाओंकी ओर देखते वह केवल दुःखित हृदयके मनुष्योंका उच्छ्वास मात्र है । तभी तो एक ओर स्वदेशवाद दूसरी ओर देशकी स्त्रियोंकेलिए पाश्चात्यस्त्रियोंका स्वातन्त्र्य-वाद यौं परस्पर विरुद्ध दो वाद प्रचलित हैं । पश्चिमी देश स्त्रियोंकी स्वतन्त्रताका क्या परिणाम भोग रहे हैं और उनका गृहजीवन किस प्राकार ढोलकी पोलमें समाया हुआ है, यदि एकधाभी दृष्टान्त हम यहां लिखें तो वह हमारे इस ग्रन्थकी पवित्रताके बाहर होगा । ता २० जानवरी २० के माडर्न रिव्यू पेपरमें पंजाब केसरी, देशभक्त लाला लाजपतरायने ६ वर्ष अमेरीका प्रवाशकर जो अनुभव प्राप्त किया उससे " हिन्दुस्थानकी सामाजिक पुनर्घटना " नामका लेख प्रकाशित कर स्त्री स्वातन्त्र्य पर हावे-लॉक इलिस नामके किसी पाश्चात्य विद्यान्‌का मत प्रकट करते हुए अपने सुधारक भाइयोंको उपदेश किया है कि स्त्री

पुरुषोंको समान मानकर जो दोनोंको एक दरजे पर रखनेका प्रयत्न किया जाता है वह समाजका घातक है। इस लिए भारतके सुधारकोंको स्त्रियोंका सुधार किसी योग्य दिशासे करना चाहिये इत्यादि। ऐसी ही बातें भारत भारतीके विद्वान् भी अनेक वर्षोंसे चिल्लाते आरहे हैं परंतु [1]श्वश्रूनिर्गच्छोक्ति न्यायकी तरह उनके कथन पर लेशतोऽपि ध्यान दिया जाता नहीं। ऐसी स्थितिमें अचिर भविष्यमें जो देशका सुधार होगा वह कैसा होगा इसका ध्वनिसे वाद्य परीक्षाकी तरह अभीसे पता लगा सकते हैं।

अस्तु। यों जब समाजका प्रमुख वर्ग देशकी आचार विधिसे उदासीनता प्रकट करता है, अशिक्षित अर्ध शिक्षित जनता पर पर उसकी कृतिका जादूका सा प्रभाव पड़ता है।

राजपुताना, पंजाब आदि प्रदेशोंके जो अहीर जाट आदि जमीदार लम्बरदार गण, थोड़े दिन पहले मांसको मिट्टी और मद्यको पागल पानी कहकर पुकारा करते थे, जितनी पहरेदारीके समयमें गावोंमें ढोरोंके लिए पानी और गोचर भूमिका यथेच्छ प्रबन्ध रहता था, जो सायं, प्रातः दो घड़ी ग्रामवसतियोंके द्वार देशोंमें

---

१ सासकी गैर हजारीमें पड़ोसन बहूके पास छाछके लिए गयी। बहूने कहा आज छाछ नहीं है। इतनेमें सास आ गयी। बहूका वह बोलना सासको बुरी तरह अखरा। वह बोली है छाछ। परंतु जब घरमें घुसी निकलकर धीरेसे बोली हां आज तो सच मुचमें छाछ नही है। जब बहूने उस सफाईका अर्थ पूछा, बोली तू क्या जाने बोलना? जब गृहमें अधिकार मेरा है। इत्यादि।

बैठकर भूखेको मुठ्ठीचने, प्यासेको पानी, और भूले भटके पथि-कोंको मार्ग बताने आदि उपकारी कामोंमें अपना समय लगाया करते थे, शत्रुके साथ पुत्र लड़कर आनेपर भी जिनकी अमल-दारीमें न्यायका अन्याय नहीं होता था, हाथमें सुमरनी, और हृदयमें दया धारण कर जो शुभ्र, श्याम केशयुक्त धर्मात्मा जमीदार शरणमें आये दीन दुखियाओंको ऐसे दीखते मानो कोई पाण्डववंशी धर्मवीर बैठे हुए हैं। उनके पदोंपर इन १०—९ वर्षोंमें कहीं कहीं ऐसी संताने निपटी हैं जो नवीन नागरिकोंकी शिक्षाकी बूसे भ्रष्ट हो गावोंमें कलाल खाने कबाबखानोंके प्रचारसे बद-मासोंकी टोलियां तयार कर, दिन दहाड़े गरीब ग्रामीणोंपर अत्या-चार करते भी आगापीछा नहीं सोचती हैं । विचारे निम्न श्रेणिके गृहस्थोंको दिनरात उनकी बेगार भुगतते कण्ठमें प्राण आगये परंतु फिर भी उनकी सुनायी नहीं होती है । क्योंकि हाकम अहलकार लोग भी उन बातोंको चाहते हैं जो उन्हें वहां जाने पर तयार मिलती हैं। भला जब यौं चोर कुत्ते दोनों मिल जायें साहकी भलाई क्यौं कर हो ?।

यौं सर्वोपाय परिभ्रष्ट भारत आज अनाचारके विकट प्रवाहमें पड़कर वहा जा रहा है। वह कहां रूकेगा ? किस रूपमें रहेगा ? आदिकी कल्पना भविष्यके गर्भमें है। फिर भी चरित्र सुधारक ग्रन्थोंका प्रचार समाजमें जोरशोरके साथ होना चाहिये । क्यौंकि स्वाभिमानकी सुधि दिलानेके लिए इससे बढ़कर दूसरा कोई

उपाय नहीं है। बस यही सोचकर मैं अनेक वर्षोंसे एक ऐसी ग्रन्थमाला निकालनेकी चिन्तामें था जो सामाजिक विचारोंको सुधारनेके लिए सर्वोपयोगी हो। कहना न होगा कि उसी मालाका यह प्रथम पुष्प सुज्ञ वाचकोंकी सेवामें सादर समर्पण किया जाता है। इस छोटीसी पुस्तकमें प्रायः सदाचारकी वे ही बातें संग्रह की गयी हैं जो मनुष्यमात्रके उपयोगमें आ सकें। क्यों कि सदाचार वह धर्म है जो श्रौत, स्मार्त, धर्मोंकी अपेक्षा स्वतन्त्र और सर्वोपयोगी माना जाता है। सदाचारकी उपयोगिताके लिए इतना कहना काफी होगा कि मनुस्मृतिके कालमें जो सदाचार वेदाः स्मृतिः सदाचारः इस पाठक्रमके अनुसार तीसरे नंबरमें था महाभारतकालमें वह सदाचारः स्मृतिर्वेदाः शान्ति-पर्वकी इस उक्तिके अनुसार प्रधान धर्म माना जाने लग गया था। महाभारत आनु॰ प॰.अ॰ १०४ में महाराज युधिष्ठिरने जहां मनुष्योंकी अकाल मृत्युका कारण पूछा है वहां सर्व धर्मज्ञ भीष्म पितामहने सदाचारकी शिथिलताको हेतु बताया है। पूर्ण आयुष्य, वाञ्छित संतान, कीर्ति, धन, और आरोग्य आदि काम्य पदार्थ, जैसे सदाचारके पालन करनेसे प्राप्त हो सकते हैं एवं कोढ, मृगी, जैसे पाप रोग भी झड़ जाते हैं। यों सदाचारकी प्रशंसा नैतिक, धार्मिक, सर्व ग्रन्थोंमें सामान्य रूपसे मिलती है। न हि करकङ्कणस्यादर्शापेक्षा। पुस्तकमें जो विषय रक्खा गया है पाठकोंके सामने है। मेरा आग्रह है कि जो सज्जन इस लघु

---

१ मनु. अ. २. श्लो. १२.

लेखको आद्योपान्त पढ़ेंगे अनेक बातें उनको अपूर्वताके रूपमें मिलेंगी। लेख रचना ऐसे पवित्र भावोंके साथ की गयी है कि परिवार पूर्ण गृहोंमें पितामहकी गोदमें बैठकर १० वर्षका बालक पढ़े, और छोटे मोटे सर्व स्त्री पुरुष सुनें तो सबको उपदेश प्राप्त हो। और एक भी शब्द ऐसा न मिले जिससे किसीके चित्तपर कुत्सित प्रभाव पड़े। पुस्तकमें मुख्य बातें सूत्र रूपसे लिखकर शेष स्पष्टीकरणके तौरपर अङ्कित की गयी हैं। मनोरञ्जनके लिए मौके मौके पर सरल नूतन और उपयोगी दृष्टान्त भी रक्खे गये हैं। प्रथम मेरा विचार इस ग्रन्थको संस्कृत भाषामें लिखनेका था। किंतु सर्वसाधारणमें प्रचारके लिए अनेक सुज्ञ जनोंके अनुरोधसे प्रथमावृत्ति हिन्दी हीमें की गयी है। अगाड़ीका संस्करण बहुत जल्द संस्कृत भाषामें प्रकाशित किया जायगा। यदि सहृदय पाठकगण मेरे इस श्रमको किसी प्रकार उपयोगी जानकर अङ्गीकार कर लेंगे तो शेष पुष्प भी अपने रसभरित मकरन्दसे उनके मनको आमोदित करेंगे।

रामनारायण शास्त्री गौड़। नासिक

श्रीः

सदाचारदर्शन ।

शब्दार्थविचार १

आर्या—दानं मानमहत्वे । शोभा संपत्तयो धरा धाम ।
आचारके विना ये । होजाते हैं समस्त वे काम ।

सूत्र—सच्चरित्र वर्तन प्रकारको सदाचार कहते हैं ॥ १ ॥

स्पष्टीकरण । जिस चरित्रशीलतासे किसीके साथ अन्याय न होकर मर्यादापूर्वक जीवन व्यतीत किया जाय उसका नाम सच्चरित्र और तदनुसार वर्तन प्रकारको सदाचार कहते हैं । उदाहरण—नल राम युधिष्ठिर आदि महापुरुषोंके चरित्र सच्चरित्र थे । उन्होंने पक्षपात पूर्वक किसी धर्मका अनुष्ठान नहीं किया । संभावना रखकर आये हुए शत्रुओंसे भी बना वहांतक सत्यको नहीं छुपाया । उस समयकी राजरूढिके अनुसार महाराज नल द्यूतक्रीड़ामें प्रवृत्त हुए थे परंतु सर्वस्व हार जाने पर्यन्त भी खेलमें छल

---

१ आचार लक्षणो धर्मस्सन्तश्चारित्रलक्षणाः । साधूनांच यथावृत्त मेतदाचार लक्षणम् । महाभा० आनु० प० अ० १०४, श्लो ९ ।

नहीं किया । अन्तमें फौज, फाटा, राज्य, कोश, आदि सर्व विजेताको संभलाकर वनको चले गये । जब दुबारा जूआ हुआ, नलने पुष्करनरेशको हरा दिया । परंतु वैसी दुर्दशासे उसको रवाना नहीं किया जैसीसे पुष्करने पहले नलको किया था । रामचरित्र भी ऐसाही लीलामृत ललाम है। सच्चा स्वार्थत्याग, पितृभक्ति, मातृप्रेम, भ्रातृसौहृद, मैत्रीपालन, भृत्यवस्यता, शरण्यसाधुता, तितिक्षा, उदारता, आस्तिकता, ब्रह्मचर्य, तथा प्रताप और शान्तिके श्रीराम मूर्तिमन्त अवतार थे ।

महाराज युधिष्ठिरको भी महाभारतकी लड़ाईमें एकाधे प्रसंगपर "नरोवा कुञ्जरोवा" की कपट नीतिको स्वीकार करना पड़ा था । परंतु उनकी स्वतः की ओरसे उस काममें अनिच्छाही थी । राजतन्त्र बहुमतसे चालित किया जाता है ।

स्त्रियोंमें सीता, सावित्री, दमयन्ती, पद्मावती, अनसूया, सुकन्या, लक्ष्मी, संयुक्ता, आदि अनेक महा महिला सच्चरित्र हो गयी हैं । उन्होंने आपत्ति कालमें भी अपने पवित्र चरित्रोंपर दोषकी रेषा आने दी नहीं। दमयन्ती प्रथम नलको अङ्गीकार करचुकी थी। इन्द्रादि देवताओंके प्रार्थना करनेपर भी वह अपनी प्रतिज्ञासे विचलित नहीं हुई । पतिकी रक्षाके लिए आपत्ति कालमें उसके साथ रही । जब महाराज रानीको निद्रावस्थामें त्यागकर चले गये, मर्यादा पूर्वकचेदीपतिकी रानी (मौसी) के पास दास्य कर्मकर कालयापन किया । जब पिताके गृहपर पहुंच गयी, माताको एकान्तमें अपना

मनोरथ कहकर पतिका पता लगवाया। और बाद श्वसुरगृहमें रहकर चरित्र शीलतासे अपनी अन्तिम जीवनी पूरी की। यों साधारण असाधारण सर्व अवस्थाओंमें जो स्त्री पुरुष अपनी मर्यादासे चलायमान न हों वे सच्चरित्र और उनके वर्तन प्रकारका नाम सदाचार है।

वासिष्ठ, वामदेव, विश्वामित्र, परशुराम, उत्तङ्क, पराशर, अगस्त्य, अश्वत्थामा, दशरथ, नहुष, ययाति, यदु, आदि ब्रह्मर्षि राजर्षिगण, और अहल्या, द्रौपदी, कुन्ती, कैकेयी, आदि स्त्रियां ये सर्व भी लोकमें सच्चरित्र माने गये हैं। परंतु उनके कतिपय आचरण ऐसे भी थे जिनको इस समयका चरित्रशील संसार सच्चरित्रके नामसे स्वीकार नहीं करता। जैसे वसिष्ठका राजा निमिको शाप देना' वामदेवका निन्दित चौर्यकर्म करना, विश्वामित्रका गोहरण, परशुरामकी क्षात्रचर्या, उत्तङ्कका सर्पमेध, पराशरका राक्षसमेध, अगस्त्य महर्षिका वातापिभक्षण, अश्वत्थामकी बालहत्या, दशरथका श्रवणवध, नहुषका इन्द्राणी पर कामचार, ययातिकी आत्मस्तुति, यदुका गुरु तिरस्कार इत्यादि। एवं अहल्याका इन्द्रसमागम, कुन्तीका सूर्यावाहन, द्रौपदीका बहुभार्यात्व, कैकेयीका पतिविरोध, आदि चरित्रोंको भी इस समयकी चरित्रशील गृहिणी नहीं सराहती। ऐसी स्थितिमें जब सच्चरित्रताही संदेह ग्रस्त है तब सति कुड्ये-चित्रम् इस न्यायके अनुसार उसके आश्रयमें रहनेवाले सदाचारका पता उक्त लक्षणसे लग नहीं सकता। इस अरुचिसे सदाचारक दूसरा लक्षण किया जाता है।

सूत्र—येद्वा शान्त हृदयसे सावधानताके साथ स्वीकार किया गया जो आप धर्मसे अन्य आचार उसका नाम सदाचार है ॥ २ ॥

स्पष्टी—राजा निमिने यज्ञार्थ वसिष्ठको निमन्त्रण देकर अन्य महर्षिकी अध्यक्षतामें उस कर्मको निपटाया था इस लिए आपमानित हो वसिष्ठजीने शाप दिया था। मानापमानकी तरङ्गोंसे क्षोभयुक्त हृदय, शान्त हृदय नहीं इसलिए वसिष्ठजीका उक्त आचरण सदाचार धर्मके नियमोंमें समावेशपा नहीं सकता। उतङ्क, विश्वामित्र, अश्वत्थामा, आदिने वे वे कर्म मानसिक विकारोंके बस हो होकर किये थे। शान्त हृदयसे प्राप्य सदाचार धर्मको, मानसिक विकार स्पर्शकर नहीं सकते। वामदेवने आपद्धर्म आपद्धर्म पुकारते हुए निषिद्धाचरणोंमें भाग लिया था। सूत्रमें आपद्धर्मसे अन्य जो आचार उसका नाम सदाचार कहा है। अगस्त्य, पराशर, आदि महर्षियोंने लोकरक्षार्थ निन्दित आचरणोंमें प्रवृत्तिकी थी। जब धारणाद्धर्मः इस निर्वचनसे लोककी धारक क्रियाका नाम धर्म है तब उनके उक्त चरित्रोंपर दुराचरणकी कल्पना कर नहीं सकते। शास्त्रमें स्त्रीहत्याको भी पाप कहा है। परंतु परम आप्त श्री रामन्द्रजीने लोकसंहारिणी ताड़काका वध करते पाप नहीं माना। इससे धर्मका मार्ग वही है जिसमे लोकहित हो। दशरथने असावधानीसे श्रवणकी हत्या की थी। प्रमादयुक्त कर्म सदाचार धर्मकी सीमासे बाहर है। नहुष, ययाति, यदु आदिने

१ अनापद्धर्म आचारो त्यप्रमादो पराभवः। महाभा. शा. रा. ७०

काम, मद, मोह, आदि षड्वर्गसे पराभूत होकर उन उन अकार्योंमें भाग लिया था। काम क्रोधादिसे पराभूत हृदय शान्तहृदय नहीं इस लिये उनके उक्त चरित्रोंकी भी गणाना सदाचारके नियमों में अति व्याप्त हो नहीं सकती। एवं अहल्याका इन्द्र समागम, कुन्तीका सूर्या वाहन, आदि कर्म अज्ञान अथवा कौतुक कृत थे कैकेयी पर मन्थराके दुर्मन्त्र पड़े हुए थे। सदाचारका स्थान अज्ञान, कौतुक, अथवा वहकाव, सिखाव आदिकी बातोंसे नितान्त दूर है। द्रौपदीको रत्न विधान कहकर शिष्ट पुरुषोंकी पंचायती द्वारा स्वयं मातापिताओंनें पांच पतियोंके लिए अर्पण की थी। उससे उसकी दुश्चरित्रता सिद्ध हो नहीं सकती। वरन् पितुराज्ञा परोधर्मः मातुराज्ञा परागतिः इसन्यायसे माता पिताओंकी आज्ञा मानना ही बेटा बेटीका धर्म है।

अब यहां यह शङ्का हो सकती है कि जब पर्वोक्त कतिपय चरित्र सदाचार धर्मके प्रतियोगी थे तब उनके करनेवालोंको लोकमें सच्चरित्र क्यौं माना गया? इसका उत्तर यह है कि काम क्रोधादि मनोविकार देहधारी मात्रको स्वभावतः प्राप्त हैं। किसी एकाधे चरित्रसे कोई सच्चरित्र वा दुश्चरित्र बन नहीं सकता। सच्चरित्रता दुश्चरित्रता आदिकी परीक्षाके लिए चरित्रनायकके संपूर्ण जीवन चरित्र पर दृष्टिपात करना पड़ता है। अमुक चरित्रनायकने अमुक चरित्र क्यौं किया? किस समय किया? न करने पर क्या होता? करने पर क्या हुआ? वह नास्तिक है कि

आस्तिक ? आदि अनेक प्रश्नों पर विचार करना पड़ता है । तब कहीं सहृदय पुरुषोंकी सच्चरित्रता दुश्चरित्रता पहचानी जा सकती है । पूर्व महा पुरुष और महा महिलाओंके चरित्रोंपर जब हम संपूर्ण दृष्टिसे काम लेते हैं तब उनकी सच्चरित्रतामें किसी भी तरहका संदेह रह नहीं जाता है ।

रह गयी निषिद्धाचरणोंकी बात, सो निषिद्धाचरण दो प्रकारका होता है । स्वार्थबुद्धिकृत, परमार्थ बुद्धिकृत । स्वार्थ बुद्धिकृत निषिद्धाचरणभी कोई सामयिक, कोई असामयिक । कोई ज्ञानकृत, कोई अज्ञानकृत । कोई गुरु, कोई गुरुतर । कोई लघु, कोई लघुतर, यों अनेक प्रकारका माना गया है । वहां संक्षेपतः ऐसा विचार किया गया है कि स्वार्थबुद्धिकृत निषिद्धाचरणोंकी जहां वध, बन्ध प्रायश्चित्त आदि द्वारा शुद्धि कर ली जाती है वहां चरित्रदोषकी कल्पना निवृत्त हो जाती है । इस शास्त्राधारके अनुसार पूर्वोक्त महा पुरुषोंमेंसे जिस जिससे कामतः निषिद्ध कर्म बन आये थे सबने उत्तर कालमें प्रायश्चित्त द्वारा उनका संशोधन किया था ।

महर्षि वसिष्ठने अपमानित हो राजा निमिको शाप दे तो डाला था, परंतु निमि इस लिए दोषी नहीं ठहरा कि, जब वसिष्ठजी अन्यत्र यज्ञ करा रहे थे तब निमिने विश्वको चला चल सोचकर अन्य महर्षिकी अध्यक्षतामें उस कर्मको करना उचित समझा था । इसीसे अपनी निर्दोषता सोचकर जब बदलेमें निमिने भी शाप दिया कि प्रत्युत्तर न देकर सच्चरित्र वसिष्ठजीने चरित्र रक्षा करली

थी। सच्चरित्र वहभी है जो अनुचित काम बन आनेपर उनका पक्ष गृहण न करे। दुर्वाक्यका उत्तर दुर्वाक्य सुनकर जो पुनः दुर्वाक्य न कहे उसको भी लोग भला आदमी कहते हैं। विश्वामित्रने एक हाथसे वसिष्ठकी कामधेनुका हरण किया था, तो दूसरेसे उसी समय उसका प्रायश्चित्त कर डाला था। वह प्रायश्चित्त उसका राज्य परित्यागही नहीं था। अखण्ड तपस्याका सूत्रपातभी वहींसे शुरू हुआ था। परशुरामकी क्षात्रचर्या सकारण थी। उस समय प्रजापालकोंमें निरङ्कुशता बे हद् बढी हुई थी। समर्थ श्री परशुरामजीने उनपर उग्रनीतिका अंकुश स्थापन कर लोकमर्यादाका संरक्षण किया था। दुश्चिकित्स्य व्रणोंपर शस्त्रक्रिया न्याय्य है। फिरभी श्रीरामचन्द्रजीके समक्ष निर्वेद प्रकाशित कर उन्होंने अपने ब्राह्म चरित्रोंका संशोधन कर डाला था। अश्वत्थामाने बालहत्याके बदले कुचैल व्रत पालन किया था। महाराज दशरथ श्रवणकी हत्यासे अत्यन्त खिन्न मना होकर उसके अन्ध माता पिताओंके सामने दासकी तरह जाकर खड़े हो गये थे। बाद अपने दुष्कर्मको उनके सामने रोकर और उनके धिक्कारने भी उत्तर न देकर सच्चरित्र बन गये थे। भूल सबसे हो सकती है परंतु जो भूलपर पश्चात्ताप करे या क्षतिपूरण कर दे उसको भी लोकनीति निर्दोष मान लेती है। नहुषने अनेक वर्ष वनमें कष्टके काटकर महाराज युधिष्ठिरके समक्ष वृत्तं वृत्तंका मण्डूकराव रटते हुए पश्चात्तापपूर्वक अपने साहसका सम्मार्जन किया था। पश्चात्तापभी प्रायश्चित्तोंमें माना

1 मनु० अ० ११। २२८।

गया है । महाराज ययाति आत्मश्लाघाके कारण स्वर्गसे निकाल दिये गये थे । धन, मान, मदादिकी संवर्धनामें अच्छे अच्छे योग्य पुरुष भी कभी कभी विनयको भूल जाते हैं यही उसका स्पष्टीकरण है । यदुने गुरु (पिता) की आज्ञा भङ्गरूप पापसे छुटकारा पानेके लिए अधिकारोचित राज्यको त्याग दिया था । अहल्याने कठिन तपस्या कर अपनेको सच्चरित्र बना लिया था । शान्ति पर्वकी शोक सभामें सूर्यावाहनका वृत्तान्त कहकर कुन्ती निर्दोष बन गयी थी । न छुपानाभी पापोंका प्रायश्चित्त माना गया है । जिन्हे पाप करनेका अभ्यास पड़ जाता है वे अपनेको पापी नहीं कहते । कैकेयीकी कृतिका प्रायश्चित शत्रुघ्नने मन्थराको करा दिया था । कैकेयी भी श्रीरामके समक्ष अपनी भूल स्वीकार कर चुकी थी । यौं उन सर्व स्त्री पुरुषोंने अपने अपने अकार्योंपर यथावत् प्रायश्चित्त किया था । इस लिए उन पुराणप्रसिद्ध महा महिला और महापुरुषोंपर चरित्र दोषकी धारा लागू हो नहीं सकती और यौं वे सभी सच्चरित्र थे ।

जब अगस्त्य महर्षिने लोक कण्टक वातापि राक्षसोको अपनी जाठराग्निसे पचा डाला, मानों असङ्ख्य भद्र पुरुषोंके हृदयका शल्य दूर कर दिया । राक्षसभक्षणका समाचार पाकर समस्त नागरिक और वनवासियोंने एक महासभाकी जिसमें अगस्त्यको महात्माकी उपाधि दी गयी । और बड़े हर्षके साथ उनका आभार

१ ख्यापनेनानुतापेन तपसाऽध्ययनेन च । पापकृन्मुच्यते पापात्तथादानेन चापदि । मनु ११।२२८.

मनाया गया । खेद है कि अगस्त्यके उस विश्व हितकारी कार्यको पड़ोसके टगस्त्यने नहीं सराहा । वे मारे ठस्सेके एक लम्बे चौड़े टट्टूपर चढ़कर सभामण्डपकी ओर दौड़े। और उत्सवके अन्तमें महात्मा अगस्त्यको राक्षसभक्षी, दुराचारी, दुश्चरित्र, धर्महार, आदिके टप्पे सुनाने लगे कि, दांत गिर जाने लगे कि, वचन अड़ जाने लगे कि, टट्टूसे पड़ जाने लगे कि, बहुत घबराने लगे कि, चटपट लोगोंने उनकी सुनी अनसुनी कर बांस बरेलीसरीखे किसी विशाल पागलखानेमें भेज दिया । इसलिए परमार्थी जीवोंके चरित्रों पर यद्वातद्वा करना टेढी खीर है । महाकवि कालिदासने रघुवंश सर्ग ९ में महात्मा पुरुषोंके विरुद्धाचरणोंके बाबत दृष्टान्त दिया है कि अग्निखेतको जला कर भी बीज प्ररोह योग्य बनाती है । अर्थात् जब जलाना जिलानेके लिए है तब अनाचार भी सदाचार है इत्यधिकम् । सारतः यह उपलब्ध हुआ कि प्रसिद्ध स्त्रीपुरुषोंके चरित्रोंमें विरुद्ध अंशका त्याग और अविरुद्धका स्वीकार कर सदाचारका पालन करना चाहिये । इस सिद्ध पृथाको छोड़ कर अनेक अपक्व बुद्धि सदाचार संप्रदायको यों कहकर त्याग दिया करते हैं कि उसमें यह दोष है वह दोष है इत्यादि । परंतु दूसरी ओर पक्वबुद्धि मनुष्य दोषयुक्त अंशका त्याग और निर्दोषका स्वीकार कर उसीसे मुक्त हो जाते हैं । वे[1] कहते हैं कि सर्वनाशके प्रसङ्गमें जो आधा त्याग

---

१ सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः । अर्धनाशे समुत्पन्ने सर्वं त्यजति दुर्मतिः ।

देता है वह बचे हुए आधेसे अपना काम चला सकता है । परंतु जो आधा जाता देखकर सर्वस्वको त्यागता है उससे बढ़कर और मूर्खराज शिरोमणि कौन होगा ? ऐसे ही आशयका उपदेश विद्या समाप्त कर गृह जानेके लिए आज्ञार्थ उपस्थित शिष्यके प्रति तैतिरीयोपनिषद्में गुरुने किया है ।

यान्यस्माकं सुचरितानि तानि
त्वयोपास्यानि नो इतराणि

हे सौम्य; जो हमारे उत्तम आचरण हैं तू उन्हींका अनुकरण करना इतर सर्व साधारणोंका नहीं । इत्यादि । ठीक है । गुरु यदि तमाखू सूंघते हों तो पासमें रहनेवाले २० विद्यार्थियोंका यह धर्म नहीं कि २० डब्बियां खरीद कर रख लें । हां यदि गुरु जन सायंप्रातः सन्ध्या करते हों, योग साधते हों, पढ़ानेमें रोष आलस्य आदि न करते हों, तो बीसों शिष्योंको चाहिये उनके उन चरित्रोंको सदाचार जानकर गृहण करें ।

सोहनलालने जन्म भर गांजा चरस उड़ाया । वेश्या नचायी । जूआ खेला । रिस्वत खायी । नकली दस्तावेज बनाये । कैद काटी । आदि अनेक दुर्गुण उसमें थे । परंतु साथ ही कुछ सद्गुण भी उसमें थे । वह मातृभक्त था । आस्तिक था । उदार था । सबकी सुनता था । सुनकर क्रोध नहीं करता था । इत्यादि । एक बार विधर्मियोंके आक्रमणसे अपने किसी पूज्य देवताका टूटता हुआ मंदिर देखकर उसको जो धर्मश्रद्धा उत्पन्न

हुई अपनी अवशिष्ट संपत्ति और अधिकाधिक समयको उस कार्यके प्रीत्यर्थ अर्पण कर अपने अध्यवसायसे एक उठते हुए देवस्थानको बचा लिया। जीवनमें एक ही वार चाहे उसको ऐसा सुयोग क्यों न मिला हो परंतु उससे उसकी सर्वत्र वाह वाह हो गयी। सोहनलालके १०० वर्ष बाद उसके पुत्र मोहनलालने ऐसी योग्यतासे सदाचारको अपनाया कि पांच ही वर्षमें अपने पवित्र चरित्रोंसे पिताके नामके समस्त दुर्वादोंको धो डाला। पैसा उसके पास नहीं था। वह एक भाड़ेके मकानमें अपने छोटेसे कुटुम्बको रखता था। परंतु सच्चरित्रताका सौरभ उसका चारों ओर महक उठा था। इसलिए नगरके अच्छे अच्छे श्रीमन्तोंमें उसको मान तान मिलने लग गया था। एक रोज बाबू श्रीनारायणजीने उसकी योग्यतापर भरोसा कर पंजाबकी किसी मण्डीमें।) पतीपर दानेका व्यापार करनेके लिए भेज दिया। मोहनलाल अपनी सत्यनिष्ठासे यशस्वी हुआ। उसकी भाग्य लक्ष्मी चमकी और थोड़े ही दिनोंमें वह लक्षाधीश बन गया। जब वह अपनी जन्मभूमिमें गया पिताने जिस देवस्थानकी रक्षा की थी नवीन बनवा कर वहां एक प्रवेशिका पाठशाला और छोटासा दवाखाना खोल दिया। पिताके किसी दुश्चरित्रको उसने प्रतिवचन नहीं दिये। ऐसे पुरुषोंका नाम सच्चरित्र और उनका जो आचरण प्रकार उनका नाम सदाचार है।

शिष्टता और अपलक्षण २

सूत्र—सदाचार मार्गके पथिकको बचपनहीसे शिष्टताका आश्रय लेना चाहिये ॥ ३ ॥

स्प०—अत्यन्त सावधानतापूर्वक जो खोटे संग संस्कारोंसे बचकर रह सकता है वही शिष्ट पुरुषोंकी नामावलिमें प्रविष्ट हो सकता है ।

सूत्र—कुसंस्कार दूषित वृक्षसे फलदार वृक्षका दर्शन कौन कर सकता है ॥ ४ ॥

स्प०—अर्थात्-देखने भरकी शिष्टाई शिष्टोचित कार्य नहीं करती इसलिए शिष्टता प्राप्त नहीं कर सकती । नहि सिंही क्षीरं मृणमये पात्रे स्थितिं लभते सिंहनीका दूध मिट्टीके पात्रमें नहीं ठहरता ।

सूत्र—[1]शिष्टताका बाह्यलक्षण हाथ पांवनेत्र वक्त्र आदि इन्द्रियोंकी चञ्चलताका विजय करना है ॥ ५ ॥

स्प०—बाहरी इन्द्रियों पर शान्ति मुद्रा धारण करने पर भी जो मनसे उनके वेगको नहीं रोकता वह मिथ्याचारी शिष्टताका पात्र बन नहीं सकता । शिष्टता प्राप्त करनेके लिए मन सहित इन्द्रियोंकी चञ्चलताका विजय करना पड़ता है ।

सूत्र-[2]लोष्ठमर्दन तृणच्छेदन नखभक्षण कुक्षिस्फोटन भ्रूविजृम्भण मुखविक्षेप अक्षिचालन भूमिकूर्चन अट्टहास वृथाहास मक्षिका

---

१ न पाणि पाद चपलो न नेत्र चपलोऽनृजुः । न स्याद्वाक् चपलश्चैव न परद्रोह कर्मधीः ॥ मनु. अ. ४ श्लो. १७७.

२ लोष्ठमर्दी तृणच्छेदी नखखादीचयो नरः । सविनाशं व्रजत्याशुः शूचकोऽशुचिरेवच, ॥ मनु. अ. ४।७१ ।

मारण, अकारण क्रोध, वृथावादिता, बहुवादिता, उच्चैर्भाषण, अस्पष्ट भाषण, व्यङ्गभाषण, आदि निकम्मे कामोंको और मुख कर्ण नासिका आदि इन्द्रियोंके छिद्रोंमें उंगली करना शौचके समय जल न लेना, छलसे दोष छुपाना, आदि अकार्योंको शिष्ट संप्रदाय अपलक्षण कहती हैं ॥ ६ ॥

स्पष्टी—अपलक्षण युक्त मनुष्य शिष्टताको प्राप्त कर नहीं सकता एवंच आचारका भी पात्र बन नहीं सकता।

सूत्र—प्रमादके वस हो वृक्ष, दिवाल, गर्त, कूप, आदि पर चढ़ना दौड़ना छलांग मारना, पार जानेकी तृष्णासे अगाध नदियोंमें कूद पड़ना, दाहक मादक भेदक शोषक आदि प्राणहारी पदार्थोंको मात्रासे अधिक भक्षण करना, नखदन्त शृङ्ग प्रधान जनावरोंसे अनुचित क्रीड़ा करना आदि शङ्कास्थानी सर्वकर्म दीर्घजीवी मनुष्यके लिए वर्जित हैं ॥ ७ ॥

स्प०—शिक्षण सम्बन्धी खेल कसरत आदिका यह सूत्र निषेध नहीं करता—साहस किंवा प्रमादकी यह मनाई करता है। चौबेजीकी कथा सुनकर दुब्बेजीने कह मारा कि हम भी पांच सेर रबड़ी उड़ा सकते हैं। मन मगरा मक्खनलाल बोल उठा यदि तुम पांच सेर रबड़ी उड़ा जावो तो हम तुमको पांच रुपये दें। दुब्बेजीने कहा लावो? जैसे तैसे दुब्बेजीने ५) लेकर पांच सेर रबड़ी पेटमें तो भरलीं परंतु पीछे नानी याद आयी। २००—२५० रुपये दवा दारुओंमें खर्च किये। दो मास खटिया तोड़ी। कुशल हुई बच गया। यह तो हुई साहसकी। प्रमादकी लीजिये। वृन्दावनके ज्ञान वापी स्थान पर चातुर्मास्यकी चढ़ी बढ़ी यमुनामें २०—२० वर्षके दो नवयुवक कूद पड़े। एक

तो अपनी चालसे निकल आया दूसरेका झुकाव जो पूरकी ओर हुआ वह गया गयाके हो हल्लेके साथ जो गया सदाके लिए चला गया । कहीं उसका पता नहीं लगा । एवं ये सर्व कुलक्षण वर्षमें हजार हों मनुष्योंके प्राण लेते हैं । इसलिए वर्जित हैं ।

अष्टादश व्यसन ३

सूत्र-मद्यपान, द्यूत, स्त्री, आखेट, नांचना, गाना, वजाना, दिनकी, निद्रा, वृथा घूमना, और विवाद, ये १० व्यसन कामज हैं ॥ ८ ॥

स्प०—मद्यपानको सदाचार प्रवर्तक महर्षियोंने पञ्च महापातकोंमें माना है । और मद्यको अन्नका मल मानकर अत्यंत हेय पदार्थ कहा है । अच्छे अच्छे योग्य पुरुषोंकी बुद्धि भ्रष्ट कर मद्य उनसे जो जो अनर्थ करा डालता है लेखनीमें उनके लिखनेका सामर्थ्य नहीं है । यदुवंशी विद्या वैभव पराक्रम और सभ्यताके भंडार थे । एक दिन उनका प्रताप सूर्य इस प्रकार तपता था कि संसारमें किसी शक्तिके मनमें उनका सामना करनेकी हिम्मत नहीं होती थी । परंतु पान दोषके महापङ्कमें पड़ कर दो घड़ीमें सबके सब नष्ट हो गये । अनेकोंके प्रेत संस्कार भी नहीं होने पाये ।

सेर–प्रतिष्ठा जिनकी बह गयी पामरोंके हाथोंमें
शवभी मिले नहीं वे नाथोंमें कि अनाथोंमें ?

---

१ मृगयाक्षो दिवास्वप्नः परिवादः स्त्रियोमदः । तौर्यत्रिकं वृथाट्याच कामजो दशको गणः । मनु. अ. ७।४७.

बाप पर बेटा बड़भाई छुट भाई पर
चमक चमक पड़ता है ससुरा जवांई पर
धिक्कुबुद्धि धिक्कुवर्तन कुछ भी क्या ध्यान है
सङ्घासुरका बाप यह सुरा शैतान है ।

युरोपीय राष्ट्रोंने सन् १९१४ के विश्वव्यापी महायुद्धके समय मद्यका बहिष्कार किया था । आज वहां उसका फिर स्वागत हो रहा है । जिस देशमें महापातक और अन्नका मल कह कर धर्मतः मद्यका बहिष्कार किया गया हो उसकी उन्नतिका क्या ठिकाना ? भारतमें मद्यका धर्मतः बहिष्कार किया गया है । फिर भी जो आर्य जाति अवनत हुई पड़ी है उसमें "पीनो देवदत्तः दीवा न भुङ्क्ते" अर्थात् देवदत्त हृष्ट पुष्ट है परंतु दिनमें कुछ नहीं खाता, जैसे यहां हृष्ट पुष्टता परसे रात्रिभोजनका अनुमान किया जाता है एवं नियम पालनमें शिथिलता किंवा अन्य नियमोंकी बे परवाही ही कारणभूत हुई है ।

जूआ भी बुरा है । लोकपालवत् प्रतापी महाराज युधिष्ठिर द्यूतदोषमें पड़कर स्त्री तक हार चुके थे । पुण्यश्लोक महाराज नलने प्रथम राज्य हारा । फिर वनमें असहाय स्त्रीको छोड़ कर पुरुषोचित धर्म हारा । और अन्तमें सेवा चाकरीसे संकटके दिन पूरे किये । न दमयन्ती जैसी रानी होती न नल भर्तार घर आते ।

कवित्त—नरपति नक्षत्रवृन्द, तिलकित नल बालचन्द्र, दुस्सह दुरवस्था थी, पायी अति तुच्छको । राजपाट

कोट, हाट हारे सब ठाठ बाठ, ला ही ला पुकारत हैं, कौड़िनके गुच्छको । भूपति कुमारी, सुकुमारी सुपुकार करत, छोड़ो इस द्यूतभूत, गर्दभके पुच्छको । राजा अभिमानी, मन सानीकर मानेंगे, पड़ते हैं तीन और खेंचत हैं मुच्छको ।

तस्मात् जूआ सर्व अनर्थोंका मूल है । मनोञ्जनके लिए भी कभी न खेलना चाहिये ।

पुरुषका परस्त्री और स्त्रीका पर पुरुषके साथ जो ऐकान्तिक प्रेम उसका नाम व्यभिचार है । एकाएक प्राणहारी ऐसा कोई अनाचार नहीं जैसा व्यभिचार है । जलन्धर, वृकासुर, कीचक, आदिके उपाख्यान पुराणोंमें विशेष कर इसी बातकी पुष्टिके लिए लिखे गये हैं । परस्त्रीमें आशक्तिके कारण जयध्वज राजकुमार चण्डालोंके हाथोंसे मारा जाकर गटरमें गिराया गया था । गण्यमान्य ठाकुर गिरधारी ललाको इसी कुप्रसंगसे रात्रिके समय बढ़ई लोगोंने काट कर भूगर्भमें दबा दिया था । वे आर्यसमाजी थे और बढ़ई थे सनातन धर्मी । उनकी विधवा बहिन सुभद्राको जब अगाड़ीसे निकलती गिरिधारी लाल पुनर्विवाहका उपदेश देते । और कहते कि मेरी स्त्री बन जा । साध्वी सुभद्राको उसका वह बोलना बहुत बुरी तरह अखरता था । एक दिन जब फिर गिरिधारी लालने उसको छेड़ा कि सुभद्रा अपने बड़े भाईके कन्धेसे लग कर रोई । भाई पर उसके उस रोनेका अत्यन्त खोटा परिणाम हुआ ।

जैसे द्रौपदी द्वारा भीमने कीचकको चूग्मा लेकर देवीके भवनमें बुलाया था एक रोज रात्रिमें किसी निर्जन स्थान पर बुलवा कर ४ वढ़इयोंने उसका तमाम काम कर दिया। वाह्य प्रेमके वसीभूत होकर विदूरथ राजाकी रानीने वेणी (केशों) में छुपे हुए वर्छेसे अपने सोते हुए पतिका कण्ठ काट डाला था। उस पापके प्रायश्चितार्थ वह भी बुरी मौत मारी जाकर कुत्तोंको चटाषी गई थी। अब भी देखते हैं इस दुर्व्यसनसे भले भले स्त्री पुरुषोंकी मिट्टी पलीद होती है। तस्मात् सदाचारकी लाइन पर काम करनेवाले मनुष्यको सबसे प्रथम इस अनाचारसे वचनेकी जुम्मेदारी अपने ऊपर लेनी चाहिये। इसीसे सदाचार शास्त्रमें इस विषय पर ऐसे ऐसे वचन मिलते हैं कि व्यभिचारी स्त्री पुरुष उतने हजार वर्ष नरकवास करते हैं जितने उनके शरीरोंमें रोमकूप होते हैं। पति-पत्नियोंमें भी विशेष आशक्ति सदाचारके विरुद्ध है। आशक्तिसे उत्पन्न-हुई संतान रोगी, कुरूप, अल्पायु, विधवा आदि दोष युक्त होती हैं। इसलिए शास्त्रीय व्यवस्थानुसार धर्म संतान उत्पन्न करना प्रत्येक गृहस्थका कर्तव्य होना चाहिये।

नाचना, गाना, वजाना, भी व्यसन हैं। इनके व्यसनी समयकी परवाह नहीं करते। बस इसीसे इनकी आड़में कभी कभी अनेक अनर्थ हो जाते हैं। शाहजहांका तीसरा पुत्र औरंगजेब नाचने गाने बजाने आदि व्यसनोंसे वड़ी घृणा किया करता था। सिंहासन पर बैठते ही उसने उन गवैयों और नाचनेवाली वेश्याओंको दरबारसे

१ शस्त्रेण वेणीविनिगूहितेन विदूरथं वै महिषी जघान। सिद्धान्तदर्पणे

बाहर कर दिया जो उसके बापके समयके नौकर थे । कुछ ही दिन बाद लोगोंने एक अर्थी बनायी । और उसे लेकर रोते पीटते झरोखेंके नीचेसे निकले । बादशाहने सिर उठाकर देखा और पूछा कि यह किसका मुर्दा है ? उन्होंने उत्तर दिया कि यह संगीत विद्याका मुर्दा है हम लोग इसको गाड़नेके लिए ले जाते हैं । बादशाहने कहा इसको इतना नीचा गाड़ो जो फिर न निकल सके । धर्म सम्बन्धी गायन कीर्तन आदिका इस सूत्रके नियमोंमें समावेश नहीं है । शेष व्यसनोंका स्पष्टीकरण स्पष्ट है ।

सूत्र-चुगली साहस द्रोह ईर्षा असूया धनहरण ताड़न कठोर भाषण ये आठ व्यसन क्रोधज हैं ॥ ९ ॥

गंगाराम नाई तो बाबू बलदेवदासजीके विरुद्ध सेवादासका कान भरकर निकला और बलदेवदासजीके जासूसोंने चटपट उसको आ लिया। चरणदासी सीसमध्ये धर कर उसको उसी दम चुगलीका फल चखा दिया। साहस पर दृष्टान्त सप्तम सूत्रमें लिख दिया गया है। सेठ रामदयालजी उदारतामें प्रसिद्ध थे । परंतु वे विशेषतः उन्ही लोगोंपर अपनी उदारता प्रकट करते जो औरोंकी निन्दाके साथ उनकी भाट गिरी किया करते । इससे अनेक योग्य पुरुषोंके साथ उनका मिलना नहीं होता था। जब वे परम पद पहुंचे लोगोंने उनकी इस नीतिको याद किया । तस्मात् ईर्षा अच्छी नहीं । द्रोहमें आकर पाण्डवोंकी सभामें शिशुपालने भगवान् श्रीकृष्णको अनेक अवाच्य कहे थे। जब

---

१ इतिहासहिन्दूस्थान २ पैशुन्यं साहसं द्रोह ईर्षाऽसूयाऽर्थदूषणम् । वाग्दण्डजं च पारुष्यं क्रोधजोऽपि गणोऽष्टकः ॥ मनु. अ. ७।४८.

अति हो गयी भगवान् उठे और सुदर्शन चक्रसे उसका कण्ठ काट डाला। इसलिए परद्रोहमें भी न पड़ना चाहिये। अनेक असभ्य मनुष्योंको परायी चीज उठाने, इधरकी उधर लगाने, दूसरों पर हाथ चलाने कठोर वचन कहने आदिकी बुरी बुरी आदत पड़ जाया करती हैं। वे बार बार अपनी कृतियों पर पछताते हैं फिर भी नहीं संभलते।

ऊपर कहे हुए १८ व्यसनोंमें भी मद्य, जूआ, स्त्री, शिकार, ये ४ कामज और ताड़न, कठोर भाषण, धन हरण, ये तीन क्रोधज यों ७ व्यसन अत्यन्त अनर्थकारी हैं। ऋग्वेद ७।५।३६।६ में लिखा है कि संसारकी रक्षाके लिए हिरण्यगर्भ मनु प्रभृति कवीश्वरोंने सात मर्यादा बांधी हैं। जो उनमेंसे एकका भी उल्लंघन नहीं करता वह अन्तकालमें सूर्य मण्डके उन स्थानोंपर वास करता है जो प्रलयमें भी चलायमान नहीं होते।

दशपाप ४

सूत्र—जीवहिंसा, चौर्य, व्यभिचार, मिथ्या भाषण, कठोर भाषण, अश्लील भाषण, चुगली, परद्रोह, परधनाकाङ्क्षा, नास्तिकता, ये क्रमशः कायिक वाचिक मानसिक दश प्रकारके पाप हैं॥ १०॥

सदाचारी मनुष्यको दशपापोंसे बचकर सदा निश्चिन्त निर्भीक उत्साह युक्त रहना चाहिये। विनोदमें भी कभी कोई पापका काम

१ दोषैः प्रयुक्तः शरीरेण प्रवर्तमानो हिंसास्तेयप्रतिषिद्धमैथुनान्याचरति वाचाऽनृत परुषसूचनाऽसंबद्धानि मनसा परद्रोहं परद्रव्याभीप्सां नास्तिक्यं चेति। न्यायद० अ. १ आह्निक १.

न करना चाहिये। जिन बालकोंको बचपनमें कृमि मारने, चिडियां-ओंपर पत्थर चलाने, बैठे हुए ढोरोंको उठाने, आदिकी खोटी आदत पड़ जाती हैं वे वड़े होने पर भी थोड़ेसे खाये सदाचारी नहीं वन सकते।

दशपुण्य ५

सूत्र—दान, रक्षण, परिचर्या, सत्य हित, प्रिय, स्वाध्याय, दया, श्रद्धा, निस्पृहता ये दश क्रमशः उक्त त्रिविधपुण्य हैं॥ ११॥

जैसे पापात्मक प्रवृत्ति अधर्मके लिए होती है। एवं पुण्यात्मक प्रवृत्ति धर्मके लिए होती है।

दश धर्म ६

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधोदशकं धर्मलक्षणम्। मनु. ६-२२८

धीरज, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, जितेन्द्रियता, धी, विद्या, सत्य, अक्रोध ये दश सामान्य धर्मके नाम हैं। प्रत्येक स्त्री पुरुषको चाहिये इनका सावधानताके साथ पालन करें। सर्व साधारणके विशेषोपयोगी होनेसे ये दशधर्म भिन्न भिन्न लोकोक्तियोंमें विख्यात हैं। जैसे

सूत्र—धीरज वड़ी वात है॥ १२॥ क्षमा वड़ोंको होती है॥१३॥
मन चंगा तो घरमें गंगा॥ १४॥ परधन धूलिसमान॥ १५॥
सदाशुद्ध रहनेवाले मनुष्यसे भूत भी डरता है॥ १६॥
शरीररूपी रथपर इन्द्रियां अश्व हैं बुद्धि सारथिको

कह दो मन लगामको ऐसा कसकर रक्खे जिससे ये मनहूस घोड़े इस उपयोगी रथको किसी खड्डुमें न डाल दें ॥ १७ ॥ बलसे बुद्धि श्रेष्ठ है ॥ १८ ॥ विद्याहीन पशु है ॥ १९ ॥ सांचको आंच नहीं है ॥ २० ॥ शान्ति समान तप नहीं है ॥ २१ ॥

महाप्रतापी बलीराजाने संकटकालमें गधेके शरीरमें प्रविष्ट हो समय विताया था। परंतु धैर्यको नहीं हारा। जब इन्द्रने उसको चिड़ानेकी चेष्टा की, धृष्टतासे उत्तर दिया। और यौं धैर्यसे फिर अपनी योग्यताको प्राप्त कर लिया। अश्वत्थामाने द्रौपदीके पांच पुत्र मार डाले थे। फिर भी उदारहृदया द्रौपदीने होना था सो हो गया कह कर उस पर क्षमा ही की। अष्टावक्रने किसी ब्राह्मणकी सुंदरी कन्याको देख कर उसके मातापिताओंसे कहा इसको मेरे साथ विवाह दी जाय। पिताने वरको रूपसे अयोग्य जान कर उत्तर दिया यदि तुम उत्तरदिशाके मानससरोवरसे हमे दश सहस्र दलका कमल ला दो तो तुम्हें अपनी कन्या दे दें। जब वह अपने पौरुषसे वहां गया, उत्तर दिशाकी देवताने वृद्ध कुमारीका वेश ले कर नाना उपायोंसे उसका ब्रह्मचर्य खण्डित करना चाहा परंतु मनस्वी अष्टावक्रने तनिक भी मनः प्रग्रहको ढीला न कर उसको धर्मशिक्षा ही दी। यौं उसको प्रसन्न कर उसका दिया हुआ १०००० दलका कमल लेकर जब कन्या पिताके आश्रम पर आया ब्राह्मणने प्रसन्न हो तुर्त कुबड़ेको कन्यादान

कर दिया । एवं शेष धर्मों पर भी अनेक स्त्रीपुरुषोंने योग्यता दिखा कर यश और सुख दोनों प्राप्त किये हैं ।

आयुष्कर योग ७

सूत्र—दीर्घ जीवन, विपुल धन, वाञ्छित संतान और यश, आरोग्य, आदिकी कामनासे मनुष्यको नित्य ब्राह्म मुहूर्तमें उठना चाहिये ॥ २२ ॥

सूर्योदयसे दो घड़ी पूर्वके कालको ब्राह्म मुहूर्त कहते हैं । १० वर्षके विद्यार्थीसे लेकर प्रत्येक स्त्रीपुरुषके लिए जगनेसे वह समय लाभकारी होता है । गृहमें प्रथम स्त्रियोंको जगना चाहिये । बालकोंको सुगमतासे जगानेका उपाय प्रभाती भजन आदि आलापना है । प्रातः स्मरणीय पूज्यपाद श्रीयुत पण्डित चतुर्भुजजी ७० वर्षकी अवस्था पर्यन्त ब्राह्म मुहूर्तमें जगा करते थे । सर्व काम छोड़ कर वे प्रथम शारीरिक शौच और सन्ध्यातर्पण आदि नित्य कर्मोंसे छुट्टी पाया करते थे । जब कोई उन्हें उस बाबतमें पूछता कहते स्वास्थ्य रक्षा और धर्मकार्योंके लिए यही समय श्रेष्ठ है । जो इस समयको चुकाता है वह गिने दिनोंमें आलसी और अकर्मण्य हो जाता है । अनेक प्रकारकी खटपट करने पर भी जिस मनुष्यका भाग्य उदय न हो उसको चाहिये नित्य ब्राह्म मुहूर्तमें उठकर भाग्यकी चिन्ता किया करे । शान्ता दान्ता

---

१ कच्चिद्वौ प्रथमौ यामौ रात्रेः सुप्त्वा विशांपते । सचिंतयासिधर्मार्थौ याम उत्थाय पश्चिमे । महाभा. आदि. अ.

उस समयकी बुद्धि मनुष्यके बिगड़े हुए काम सुधार दिया करती है। बांकीपुर पटना सनातनधर्मसभाके किसी जल्सेमें महात्मा आत्मारामजीने एक रोज क्या देखा वयोवृद्ध बाबू मिरजामलजी प्रभातके ४ बजते ही अपनी मच्छरदानीमें उठ बैठे। और दोनों हाथोंकी उंगलियोंको आपसमें बुलबुलोंकी तरह लड़ाने लगे। एक बार तो आत्मारामजी चौंके कि यह क्या माजरा है? क्या मिरजामलजी किसी शैतान नगरीके चपरासीसे तो नहीं भिड़ बैठे हैं? परंतु जब उनकी उस कवायदके भाव विकारोंकी ओर ध्यान दिया गया, मालूम हुआ कि बहुधा सेठजी इस समय किसी गहरे विचारमें गोते खा रहे हैं। दिनके समय पूछने पर उन्होंने कहा मैं संवत् १९४० में एक बार काशी यात्रा गया था। अपनी दरिद्र दशासे तंग हो जब मैंने श्रीविशुद्धानन्दजी महाराजके पास सुखसे दो रोटी कैसे मिलें? ऐसा प्रश्न किया तब उन्होंने उत्तर दिया बेटा; नित्य ब्राह्म मुहूर्तमें उठकर विचार किया कर। उनकी आज्ञानुसार उस दिनसे मैं हमेशा ब्राह्म मुहूर्तमें उठा करता हूं। इस प्रातरनुष्ठानसे मैंने इन १०—२० वर्षोमें २०—३० लाख रुपये इधरसे उधर किये। मैं दिन भर वही करता हूं जो उस समय विचार लेता हूं। यौं धन चिन्ताके बाद थोड़ी देर धर्मचिन्ता भी करनी चाहिये। आयुष्यका इतनासा भाग निकल गया। इतना सा और होगा। संसारके साथ शरीरधारियोंका संबन्ध अनित्य है। इसलिए अपने सुख शान्तिके समयमें कोई

काम ऐसा भी कर लेना चाहिये जिससे संसारमें आये सरीखी एकाधी बात रह जाय ।

सूत्र—पक्षमें एकाधा उपवास भी करना चाहिये ॥ २३ ॥

उपवास दीर्घ जीवनकी जड़ी है। पूर्व मीमांसा अ० १२ में एक जगह लिखा है कि कभी कभी कुत्तेबाज जैसे जनावर भी उपवास करते हैं चाहे वे अजीर्णकी ग्लानि पाकर ही क्यों न करें। उपवास कालमें बाल वृद्ध और संतानार्थिनी स्त्रियोंको फलाहार करना विहित है।

सूत्र—पूर्व दिशाका वायु, सूर्यका ताप, और अधिक वायु सेवन करना, स्वास्थ्य नाशक है ॥ २४ ॥

जब पूर्वकी पवन चलती है अनेक मनुष्य बेमार पड़ते हैं। एवं सूर्यतापसे भी नेत्रव्याधि जुकाम पित्तप्रकोप आदि उपद्रव होते हैं। अधिक वायु रूक्षता कर प्रकृतिको दूषित करता है।

सूत्र—रात्रिके समय वृक्षके नीचे विश्राम करना मना है ॥ २५ ॥

वृक्षके आश्रयमें सब प्रकारके जीवजन्तु रहा करते हैं एवं वृक्षादि स्थावर सृष्टि दिनके समय सुप्त और रात्रिमें जागृत रहती है। जागृत अवस्थामें वह अपने श्वासोच्छ्वाससे मनुष्यके स्वास्थ्यका आकर्षण करती है। इस हेतुसे भी रात्रिके समय वृक्षके नीचे विश्राम करना मना किया गया है।

---

१ उपवासंच कुर्वीत स्नातः शुचिरलंकृतः । म. भा. आनु. १०४।८८

२ पुरोवातातप रजस्तुपारपरुषानिलान् । वाग्भटे—सूत्र. अ. २ श्लो. ४०

३ नक्तं सेवेत न द्रुमान् । वाग्भट. सूत्र. अ. २ । ३७

शेयन जागरण भ्रमण भोजन व्यायाम आदिमें अति साहस करने वाला, और स्त्रियोंमें अत्यधिक हास्य विनोद आदि करने वाला मनुष्य पूर्णायुष्य नहीं पाता ॥ २६ ॥

भावप्रकाशके कर्ता भावमिश्रने कहा है कि आहार शयन ब्रह्मचर्य[1] इनका युक्तिपूर्वक पालन करनेसे देह दीर्घकाल तक बना रहता है।

सूत्र—[2]शुभ लक्षण युक्त रत्न, उत्तम ओषधि, और सूर्य देवताके मन्त्रोंको धारण करनेसे मनुष्य अल्पायुष्य नहीं होता ॥ २७ ॥

सत्राजित्के पास १ ऐसी मणि थी जिसके प्रभावसे उसके गृहमें किसी प्रकारकी आधि व्याधि प्रवेश करने नहीं पाती थी। हिन्दुओंके घरोंमें जो तुलसीका विरवा लगाया जाता है, आरोग्यसे उसका घनिष्ठ संबन्ध है। [3]शार्ङ्गधर संहितामें लिखा है कि सहदेवीकी जटाको सिरपर बांधनेसे ज्वर नष्ट हो जाता है। होम पूजन अभिषेक आदिमें जिन औषधियोंसे काम लिया जाता है सब आरोग्यमें सहायता पहुंचाती हैं। तस्मात् दोषप्रतिबन्धक औषधि और सर्प वृश्चिकादिका विषहरण करनेवाली जड़ी बूंटियोंका दीर्घजीवी गृहस्थको सदैव संग्रह रखना चाहिये। [4]सूर्योपासनाको धर्मशास्त्र और शारीरकग्रन्थ एक स्वरसे आरोग्यप्रद बताते हैं।

---

१ आहार शयन ब्रह्मचर्यैर्युक्त्या प्रयोजितैः। शरीरं धार्यते नित्यमागारमिव धारणैः

२ धारयेत्सततं रत्नसिद्धमन्त्रमहोषधीः। वाग्भट. सू. अ. २।३१

३ ज्वरं हन्ति शिरोवद्धा सहदेवी जटा यथा। पू. ख. अ. २।

४ आरोग्यं भास्करादिच्छेत् भागवत. स्कंद २

सूत्र—दुर्भिक्ष राष्ट्रविप्लव और महामहारीके समय भगजाना उचित है ॥ २८ ॥

क्योंकि ऐसे प्रसंगोपर अकाल मृत्युका सपाटा चला करता है । जब शेखावाटीके सिंहाना नगरमें प्लेगका दौरा हुआ सब लोग भग निकले परंतु श्रीयुत पण्डित मोहनलालजी कलावटिया इस विश्वाससे नहीं निकले कि जिसकी आयी है सो जायगा । एक बार तो उनकी तान सध गयी । जब दूसरे दौरेमें भी उन्होंने वही हठ रक्खा, दो पुत्र १ पुत्रवधू १ पुत्री और दो स्त्री पुरुष आप यों ७ दिनमें ६ आदमी काम आये । उनकी हजारोंकी संपत्ति अनाथकी तरह जब्त हो गयी । तस्मात् ऐसे मौकों-पर आग्रह करना सर्वथा अनुचित है ।

सूत्र—व्याधिका प्रतीकार शीघ्र करना चाहिये ॥ २९ ॥

अनेक मनुष्य रोगके आरम्भ कालमें बेपरवाहीसे काल बिताया करते हैं । जब रोग भयङ्कर स्थितिमें पहुंच जाता है रोते हैं और पछता पछताकर मरते हैं । इस लिए रोगका प्रतीकार शीघ्र करना चाहिये ।

सूत्र-इन्द्रियोंके वस होकर मनको भटकाना ठीक नहीं ॥ ३० ॥

जो व्यर्थकी चिन्तासे मनको क्लेशित करता है वह भी सौ वर्षकी मजल नहीं पहुंचता ।

सूत्र-रात्रिदिन एक विचारमें मग्न रहना स्वास्थ्यनाशक है ॥३१॥

---

१ यत्नतश्च न कर्तव्यो ह्यभ्यासश्चापि भारत । म. भा. आनु. १०४

इसीसे सदाचारके नियमोंमें कहीं कहीं ऐसे भी वचन मिलते हैं कि प्रदोषके समय थोड़ी देर सर्व चिन्ताओंको छोड़कर मूढ समाधि धारण करना चाहिये । पठन पाठनकी व्यवस्थाओंमे जो ८ दिनमें एक दिन छुट्टीका रक्खा गया है उसका भी यही तात्पर्य है। और इसीसे नित्यकी पढाईमें भी मनकी प्रफुल्लताके लिए अनेक विषय रक्खे जाते हैं।

सूत्र—चमकदार पक्षी, गृघ्र, उलूक, जंगली भ्रमर, कपोत, कुलिङ्ग आदि शून्य चाहनेवाले जन्तु गृहमें प्रवेश करें तो शान्ति कराना योग्य है ॥ ३२ ॥

जब यदुवंशियोंका क्षयकाल समीप आया द्वारकाके गृहोंमें नाना प्रकारके अदृष्ट पूर्व वे डौल पशु पक्षी आदि दीखने लगे। ब्राह्मण लोग शान्तिका उपदेश देते थे परंतु दुर्दैवके मारे द्वारका वासियोंको वे उस समय मान्य नहीं होते थे। और यौं वहां एकाएक कुलान्तकरी घटना गुजर गयी।

सूत्र—रोग युक्त मनुष्यको रोगान्त स्नानके उरान्त श्रेष्ठ पुरुषोंका आशीर्वाद गृहण करना चाहिये ॥ ३३ ॥

मान्य पुरुष वैसे समयमें प्रसन्न हो सुखकी कामना प्रकट करते हैं। जो रोगीके लिए प्रशस्त मानी गयी है।

सूत्र—भय होनेका भी कोई काम करना ठीक नहीं है ॥ ३४ ॥

कोमल प्रकृतिका हीरालाल महाजन बाटली निकालनेके लिए जब कोई दूसरा आदमी नहीं मिला स्वयं ८० हाथ नीचे किसी

कूएमें उतर पड़ा। जब नीचे पहुंचने पर ऊपरकी ओर देखा घबरा गया। लोगोंने निकालनेकी जल्दी की परंतु जब वह रस्सीको पकड़कर ऊपर आ रहा था कँप कँपीके मारे हाथ छूट गये और पड़ते ही फोत हो गया।

सूत्र—भजन बढ़ाना उचित है॥ ३५॥

ऋषि लोग दीर्घकाल तक सन्ध्यावन्दन आदि कर्म किया करते थे। इससे वे दीर्घजीवी होते थे। इसलिए कामकी जल्दी या आलस्य सुस्ती आदिमें आकर भजन त्यागना ठीक नहीं। भजन पूजन आदिसे चित्तको शान्ति प्राप्त होती है। और उससे स्वास्थ्य शक्ति सुधरती है। **माननीय मालवीयजी** हायकोर्ट वकील हैं। प्रसिद्ध देशभक्त हैं। सुधारकोंके अगुआ हैं। फिर भी भगवद्भक्तिमें ऐसे कोमल हृदयी हैं कि थोड़ा बहुत जप अनुष्ठान नित्य करते हैं। एक रोज अलाहाबाद गङ्गाके मैदानमें किसी कीर्तनसभामें प्रल्हाद चरित्र सुनते उन्हे जो प्रेम उमटा जिस समय सर्व सभासद सामान्य अवस्थामें बैठे हुए थे वे धाराप्रवाह आंखोंसे अश्रु बहाते थे। बड़ी देरतक उन्हे देहाभासभी नहीं रहा। भजनकी महिमा अलौकिक है।

सूत्र—[1]सूर्य अग्नि गौ और श्रेष्ठ पुरुषोंके सामने मलमूत्रोत्सर्ग करनेसे मनुष्य अल्पायु होता है॥ ३६॥

---

१ प्रत्यादित्यं प्रत्यनलं प्रतिगां च प्रतिद्विजम्। ये मेहन्ति च पन्थानं ते भवन्ति गतायुषः। महा. आनु. अ. १.४

राजमार्ग अन्नक्षेत्र देवस्थान धर्मशाला आदि सार्वजनिक स्थानों पर भी मलमूत्रका त्याग न करना चाहिये।

सूत्र—अमावास्या पूर्णमासी संक्रान्ति व्यतीपात आदि पर्वकालमें देवदर्शन आयुष्कर है ॥ ३७ ॥

देवस्थानोंमें दर्शनार्थ जा कर निकम्मे झगड़े गाना ठीक नहीं और न ऊधम मचाना, देवके सामने हंसी ठठ्ठे आदि करना, ही उचित है । शान्ति प्रीति और भक्तिसे देवदर्शन कर घरको लौट जाना चाहिये । देवता श्वेतपुष्पपर विशेष प्रीति रखते हैं। अर्पण किये पदार्थका गन्ध ग्रहण करना ही देवताओंका भोग माना गया है।

सूत्र—यथोद्दिष्ट आचार आयुष्यका वर्धक है ॥ ३८ ॥

सदाचार संप्रदायने स्थिर किया है कि नित्य भोजनके समय हाथ पांव धोना चाहिये, परंतु शयनके समय धोना ठीक नहीं । शयनके समय पूर्व या दक्षिण दिशाकी ओर शिर करना चाहिये पांव नहीं। क्षौर (हजामत) पूर्वकी ओर मुख करके कराना श्रेष्ठ है। एवं दीर्घजीवी मनुष्यको निद्रासनपर अकेले सोना चाहिये । ऐसे ऐसे भी वचन मिलते हैं कि नित्य प्रातःकाल माता पिता जैसे मान्य पुरुषोंको प्रणाम करने, गौकी पूजा करने, और अश्वत्थामा, बलि, व्यास, हनूमान, विभीषण, कृपाचार्य, परशुराम तथा मार्कण्डेय ऋषि

२ देवतान्यभिगच्छेत्तु धार्मिकांश्च द्विजोत्तमान् । ईश्वरं चैव रक्षार्थं गुरूनेवच-पर्वसु । मनु. अ. ४।१५३ ।

इनका नामस्मरण आयुष्कर है । वैसे तो संपूर्ण सदाचार आयुष्य जनक है परंतु विशेष उपकारक होनेसे ये बातें भिन्न प्रकरणमें लिखी गयी हैं ।

बुद्धिवर्धक, मेधाजनक और संतानकर ८

त्रिफला चूर्ण और सैन्धव लवणको रात्रिमें सोते समय शीतल जलके साथ नित्य सेवन करनेसे बुद्धिहीन मनुष्यको बुद्धि प्राप्त होती है । एक तोला ब्राह्मीचूर्णको, शर्करा और घृतके साथ सेवन करना भी बुद्धिकारक है । नित्य बड़े प्रभात नासिकासे २० तोला जल पीनेवाला मनुष्य कुशाग्र बुद्धि, और नेत्ररोग रहित होता है । उदुंबर, वट, अपामार्गकी दतून, बुद्धिवर्धक है । नाना प्रकारके ग्रंथोंका श्रवण, वाचन, भिन्न भिन्न देशोंकी रीति रिवाजोंका निरीक्षण, सभाओंमें प्रवेश करना, आदि आचार भी बुद्धिके उत्तेजक हैं । मद्य अफीम गांजा चरस भांग आदि जितने मादक पदार्थ हैं सब बुद्धिके बिगाड़नेवाले हैं। अतः व्यसन बुद्धिसे मनुष्यको इनका सेवन न करना चाहिये । मनु. अ. श्लो.
के अनुसार संतान कामी स्त्रीपुरुषोंको आपसके प्रेमकी रक्षा करनी चाहिये । गर्भाधानके दिनोंमें स्त्रीको क्रोध मोह आदिसे बचा कर रखना योग्य है । रोने, पीटने, लड़ने, बकने आदिसे गर्भाशयकी नाड़ी सिकुड़ जाती हैं । और यौं अनेक स्त्रियोंको संतान प्राप्त नहीं होती । यजुर्वेद पारस्कर गृह्यसूत्र गर्भाधान प्रकरणमें सिंही (भटकटैया, भुई रेंगनी) की जड़को पुष्य नक्षत्रमें लाकर स्नानकी

चौथी रात्रिमें पानीके संग पीस कर स्त्रीकी दक्षिण नासिकामें सीचनेसे स्त्रियोंके गर्भसंबन्धी दोष दूर हो जाते हैं ऐसा लिखा है। यह कर्म पतिका है। कठिनता इतनी है कि सिंही सफेद फूलकी चाहिये।

असगन्धको दूधमें उकाल कर मिश्री मिलाकर पीनेसे स्त्री गर्भवती होती है। ऋतु समयमें ३ दिन पीना चाहिये। बिजोरा निम्बूके बीजोंको दूधमें भिगोकर खानेसे भी स्त्रियोंका वन्ध्या दोष दूर होता है। पीपल, अदरख, कालीमिरच, नागकेशर ये ३ मासा रोज घीके साथ खानेसे वन्ध्या स्त्री भी गर्भवती होती है। जो स्त्री आहार विहार शोक मोह आदिके कारण २–३ मास तक ऋतुमती नहीं होती वह एकाएक गर्भवती नहीं हो सकती। यदि ऋतुधर्म ४–६ मासके बाद हो तो नीचेका उपाय करना चाहिये। कोमल सुहावने शयन पर लिटाकर १०० या १००० वार धोये हुए घृतको नाभिके आजू बाजू सर्वत्र लगा देना चाहिये। मुलहटी, घृत, यव जो शीतल जलमें रक्खे हों रुईपर लगाकर नाभिके ४ अंगुल नीचे रखना उचित है। नाभीके नीचेके भागको गौके तत्काल निकाले हुए दूधसे सीचना चाहिये गर्भाधान होगा। फिर भी न हो तो ठंडे तलावके नाभिपर्यन्त जलमें स्त्रीको उतार कर जल मथाना चाहिये। कमल गट्टे सिंहाड़े थोड़े थोड़े खानेको दिये जायं गर्भधारण होगा। पीपलकी जटा, मकड़ीका जाला, मयूरकी

पांखका चंदवा, एवं अन्य अनेक गर्भाधानके योग्य उपाय अनुभवी पुरुषोंने निश्चय किये हैं सर्वोपाय करना घरवालोंका कर्तव्य है।

सभ्यता ९

सूत्र—[1]निर्लज्जकी तरह हंसना रोना या अन्य भंडाचरण करना सभ्यताके विरुद्ध है ॥ ३९ ॥ स्त्री हो चाहे पुरुष लज्जा सबका भूषण है ॥ ४० ॥

महाभारत उद्योग पर्वमें लज्जाकी प्रशंसा पर लिखा है कि निर्लज्ज मनुष्य न स्त्री है, न पुरुष । वे शरमी नपुंसकको आयी है। जैसे नपुंसकको धर्माचरणका अधिकार नहीं एवं निर्लज्ज मनुष्य सर्व धर्मोंके अयोग्य है।

इसलिए जो लौकिक अधिकारोंमें भाग चाहे उसे हमेशा लज्जाको आभूषणकी तरह धारण करना चाहिये।

सूत्र—[2]सभा समाज आदिमें शब्द युक्त अपानवायुका छोड़ना असभ्यताका परिचायक है ॥ ४१ ॥ हंसी खांसी आदिके समय मुखपर आवरण करना चाहिये ॥ ४२ ॥

पश्चिम खानदेश धूलियाके श्रीयुत स्वर्गीय दादासाहब गरुड़ प्रसिद्ध राजमान्य पुरुष हो गये हैं। एक रोज अदालतमें बकालत करते उन्हें खांसी आयी और कफका बिन्दु टूट कर जजके सामने टेबल

---

१ अह्रीको वा विमूढो वा नैव स्त्री न पुनः पुमान्।
नास्त्याधिकारो धर्मेऽस्ति यथा क्लीबस्तथैव सः ॥ महाभा. उद्यो.

२ शब्दवन्तंमारुतं न मुञ्चेत्. चरके।

पर पड़ा। जजने कोर्टकी मानहानि समझकर उनपर एक पाई दण्ड किया। दादासाहबने एक पाई पर लाखों पाई खर्च कर दण्डकी पाई वापस लेली परंतु वह बात उनकी अब तक प्रचलित है।

सूत्र—अन्धा बहरा लंगड़ा कोढी आदि अङ्गविकार युक्त मनुष्यों अथवा मुर्देकी ओर देखकर हुंकार कुचेष्टा आदि न करना चाहिये॥ ४३॥

एक मस्करा सामने किसी कानेको आते देखकर अपनी एक आंख दबा उसकी ओर ताकने लगा। कानेने कुचेष्टा समझ कर तुर्त उसकी कलई जा पकड़ी। और कहा बता मेरी दूसरी आंख कहां है? क्योंकि मैंने तेरे बापके पास धरोहरके तौरपर रक्खी थी। मस्करा घबराया। आंख देही बैठता। परंतु फिर ऐसा काम कभी न करूंगा कह कर बच निकला।

सूत्र—अनार्यपन करना मूर्खताका लक्षण है॥ ४४॥

कई मूर्खराज सनकके घोड़ेपर सवार हो चाहे सो अकार्य करने लग जाते हैं। एक रोज मोटे ताजा बाबू विद्यासागरजी महाशय तो अपनी मजलोंसे चले जा रहे थे। एक ठठोलानन्द निकला और कौतुक करता हुआ उनके पीछे लगा। जब लोगोंने हंसी उड़ाई बाबूने पीछे फिर कर देखा और जो लात जमायी नानी याद आयी। उधर गाली गलोचोंपर जब मान-

१ हीनांगानतिरिक्तांगान्विद्याहीनान्विगर्हितान्। रूपद्रविणहीनांश्च सत्यहीनांश्च न क्षिपेत्॥ महाभा. आनु. १०४।३५.

हानिका दावा किया गया कि फिर ठठोलानन्दपर १५ बेत पड़ा और पांच जुर्माना हुआ ।

सूत्र—बान्धव प्रेमी सेवक सहायक और गुह्य वृत्तान्त जाननेवालेको चल यहांसे, निकल बाहर, आदि असभ्यता सूचक शब्द न कहना चाहिये ॥ ४५ ॥ जिसको पीछे मनाना पड़े उसे प्रथम ही न रिसाया जाय ॥ ४६ ॥ दूसरेपर हाथ पांव तृण पाषाण आदिसे प्रहार करना भयंकर है ॥ ४७ ॥

राजकुमारी सुकन्याने प्रमादसे च्यवन ऋषिकी आंखमें तृण प्रहार कर जन्म भर स्त्री बन कर उनका दास्यकर्म किया था ।

सूत्र—कटाक्ष पूर्वक उपहास भी वैसाही अनिष्ट है ॥ ४८ ॥

आंख मिचका कर सूचना करनेवाले भग नामके देवताकी आंख, दक्षयज्ञविध्वंसके समय रुद्रने निकाल ली थी । भागवत स्कं. ४.

सूत्र—व्यंगहास बुरा है ॥ ४९ ॥

भीमसेन जो उस मयनिर्मित सभामण्डपमें राजा दुर्योधनको अन्धेका अन्धा कहकर न हंसता तो वह महा अनर्थकारी द्यूत क्यों होता ? और क्यों १८ अक्षौहिणी सेनाके नाशके साथ भारतकी अवनतिका प्रसंग आता ? । इसीसे हंसीमें खांसी, तृणसे भारत आदि अनेक कहावतें इस बारेमें प्रसिद्ध हैं ।

सूत्र—[1]पापी मनुष्यपर भी पापी न होना चाहिये ॥ ५० ॥

पापीकी समालोचना वही कर सकता है जो किसी तरहका पापोंसे संबन्ध रखता है । इसीसे पुण्यात्मा जीव पापियोंके पापों

---

१ न पापेऽपि पापी स्यात् । चरके ।

पर ध्यान नहीं देते । और अनेक भद्र मनुष्य पापियोंकी कथा सुनना भी नहीं चाहते । हिन्दी साहित्यमें धर्मका दूसरा नाम अजात शत्रु लिखा है । अजात शत्रु उसको कहते हैं जिसके कोई शत्रु न हो । धर्मके भी अधर्मी लोग शत्रु होते हैं परंतु विशेषता यह कि धर्म भगवान् किसीको अपना शत्रु मानते नहीं । वे कहते हैं जब तुम बुरा करनेवालोंका भी बुरीगार कहकर सामना न करोगे तब एक रोज हारकर बुरीगार आप रह जायगा ।

सूत्र—[1]सदाचारी मनुष्य प्रिय सत्य भाषी होना चाहिये ॥५१॥

कभी किसीको चुभने जैसा वचन न बोले । सत्य बोलना धर्म है परंतु सुननेसे किसीके मनको क्लेश हो वा अप्रिय जान पड़े ऐसा सत्य भी एका एक न बोलना चाहिये । सत्य उसीका नाम है जो भूत हितकी मात्रासे अत्यन्त परिपूर्ण हो । चोरोंके सामने सत्य भाषण कर सत्यवादी नरक गामी हुआ था ऐसी एक कथा महाभारत कर्णपर्वमें है । [2]शान्तिपर्वमें उसका यहां तक निर्णय किया गया है कि कदाचित् सत्यवादीको चोर पूछें कि यहां श्रीमान् कौन है तो न बताना चाहिये । न बतानेसे यदि चोर संदेह करें तो शपथ खाकर भी कह देना चाहिये कि मैं नहीं जानता । मिथ्या शपथ खाकर जिसने सदाचारी गृहस्थको अनाचारि-

---

१ सत्यं ब्रूयात् प्रियंब्रूयात् न ब्रूयात्सत्यमप्रियम् । प्रियं च नानृतं ब्रूयादेषधर्मः सनातनः ॥ मनु. अ. ४ श्लो. १३ ।

२ अकूजनेन चेन्मोक्षो नावकूजेत्कथंचन । अवश्यं कूजितव्ये वा शंकेरन्वाप्यकूजनात् । यः पापैः सह संवन्धान्मुच्यते शपथादपि । महाभा. शां. ११९।१५

योंके कर्कश पञ्जेसे बचा दिया वह मिथ्या भाषण जन्य पापसे कदापि लिप्त हो नहीं सकता । तस्मात् प्रिय सत्यही सत्यका स्वरूप है ।

सूत्र—[1]विद्यारंम्भके प्रथम बालकोंको देहशुद्धिकी शिक्षा देना चाहिये ॥ ५२ ॥

शौच समयमें मूत्रस्थान पर एकवार मलस्थानपर तीन बार मृतिकासे शुद्धिकर वामहस्तको १० वार और दोनों हाथोंको मिलाकर सातवार मिट्टीसे धोना चाहिये । मिट्टी जादा और पवित्र लेना चाहिये । साबूसे शौच शुद्धि करना आचारके प्रतिकूल है । शौच शुद्धिमें आलस्य बेपरवाही करना ठीक नहीं । कितनेही विद्यार्थी पाठशालाओंमें बड़े मलिन रहा करते हैं । उनपर मक्खियां भनभनाया करती हैं । परंतु वे कुछ परवाह नहीं करते । कई स्कूल पाठशालाओंमें अध्यापक भी अमलची, पोस्ती मिल जाते हैं । बस फिर गन्दगीकी खूब बन आती है । रामनिवास १९ वर्षका सुडौल लड़का था । परंतु वह हमेशा नासिका और मुखके दरम्यान पहुंचा फिराया करता था । इससे छोटे छोटे लड़के भी उससे घृणा करते । जब वह भोजनकर उठता क्या तो पावोंपर अन्नकणिका लगी रहती । क्या मुख हाथ अशुद्ध रहते । मलिनताका वह ऐसा दास था कि जो कपड़ा उसको आज दिया जाता वह कल खराब कर देता । ८ दिनके बाद तो तेल स्याही रंग आदिके दागोंसे वह बुरी तरह खराब हो जाता था । यही उसकी पुस्तकोंका हाल था ।

१ उपनीय गुरुः शिष्यं शिक्षयेच्छौचमादितः । मनु. २ । ६९ ।

इस लिए विद्यारम्भसे प्रथम बालकोंको देहशुद्धिकी बातें सिखाना चाहिये।

सूत्र—देश छोड़ने परभी वेश भाषा भावोंको न छोड़ना चाहिये ॥ ५३ ॥

अङ्गरेजोंमे यह महान् गुण है कि वे संपूर्ण पृथिवीपर विचरते हैं परंतु अपने वेश भाषा भावोंको नहीं छोड़ते। कई सौवर्ष उनको हिन्दूस्थानमें रहते हो गये। परंतु अब तक कोई अंगरेज बच्चा पान खाना नहीं जानता। हिन्दू जाति बहुधा इसीसे पदभ्रष्ट हुई कि वह चटपट दूसरोंका अनुकरण करने लग जाती है। मुसलमानोंके शासनकालमें हिन्दुओंकी शिखा दाढ़ीपर उतर आयी थी। आज कल श्रीमती ॲल्बर्ट फॅसन पर मोहित हो रही है। एवं सर्व प्रकार यह देश दूसरोंकी नकलों पर उतर अपने आपके महत्वको भूलता जा रहा है। और फिर तरक्की चाहता है भला जो हींग **खायगा वह हलदी कहांसे उगलेगा?** महात्मा गांधी आज इसी उपदेश पर उतर रहे हैं। उनका कहना है कि जब लोगोंमें सत्याग्रहका सूर्य उदय होगा आगे आप सुधार होता चला जायगा। उनकी शादगी और सरलताकी ओर देखकर अकड़कर चलनेवाले बड़े बड़े फॅसनेवुलोंकी आंखें खुलती जा रही हैं।

सूत्र—भजन पूजन दान सन्मान आदि पवित्र कार्य दक्षिण हस्तसे करना श्रेष्ठ है ॥ ५४ ॥ गुरुजन मिथ्याचारमें प्रवृत्त हों तो भी शिष्यवत् वर्तना ही शिष्यका धर्म है ॥ ५५ ॥

---

१ सम्यङ् मिथ्या प्रवृत्तेऽपि वर्तितव्यं गुराविह। महाभा. आनु. १-४

पिता दशरथकी प्रत्यक्ष स्त्रैणता देखकर भी श्रीरामचन्द्रजीने उनकी आज्ञा पालन करनाही अपना धर्म समझा था ।

सूत्र—निरीमिथ्या वातोंसे अमृतमय सरोवरको रुक्ष शुष्क कहना यद्वा शुष्क कण्टक वृक्षको हराभरा वताना पाप है ॥५६ ॥

वाबू काशीराम और महाशय कचोरीलाल देखनेमें वड़े सभ्य पुरुष जान पड़ते थे। परंतु उनके स्वार्थी उदरमें वड़े वड़े विषैले कृमि वास किया करते थे । वे अपने विरोधियोंके लिए निरी मिथ्या वातें लिखने वोलनेमें कुछ भी आगा पीछा नहीं सोचा करते थे । और जिन्हे वे चाहते चीटियोंको आकाशमें चढा दिया करते थे । इससे वुढापेमें एकके तो हाथोंकी उंगलियाँ गलगयी, दूसरेका नांक सिड़ गया ।

सूत्र—वड़ोंके सामने उच्चासन पर वैठना किंवा धृष्टतामें आकर उन्हें तू ता करना निषिद्ध है ॥ ५७ ॥

ब्राह्मणोंमें ज्ञानसे क्षात्रेयोंमें वलसे वैश्योंमें धनसे और शूद्रोंमें वयसे यद्यपि वडप्पन माना जाता है तथापि वयोवृद्धतासे प्राप्त हुआ वडप्पन अपनी अपनी जातिमें दुष्परिहार्य है ।

सूत्र—ताड़न शिक्षार्थ है ॥ ५८ ॥

शिष्य और पुत्रके सिवा उसका प्रयोग करना मना है । पृष्ठ, कटी और हाथ येही ताड़नके स्थान हैं ।

विना पूछे वोलना, विना वुलाये जाना और विना जाने दोष लगाना, असभ्यता परिचायक हैं ॥५९॥ [1]विद्या, रत्न, औषध और

---

१ स्त्रियो रत्नान्यथोविद्या धर्मः शौचं सुभाषितम् । विविधानि च शिल्पानि समादेयानि सर्वशः ॥ मनु. अ. २।२४० ।

हितोपदेश जैसे मनुष्य मात्रसे ले सकते हैं एवं हीनकुलसे भी स्त्री रत्न लिया जा सकता है ॥ ६० ॥

चण्डाल भी कहे कि इस मार्गमें भय है तो पथिकको सुनना चाहिये । हीनकुल शब्दसे स्वजातीय कुल लिया जाता है विजातीय नहीं ।

सूत्र—जैसे उत्तम पुरुषोंके साथ द्वेष करना ठीक नहीं एवं नीचोंका प्रसंग भी अच्छा नहीं ॥ ६१ ॥

यहां उत्तमत्ता निकृष्टता कर्मोंसे पहचानना चाहिये जातिसे नहीं । महराज युधिष्ठिरसे विद्वेष कर दुर्योधन, कर्ण, शकुनि, दुश्शासन आदिकी जो गति हुई थी वही उत्तम पुरुषोंसे द्वेष करनेवालेकी होती है ।

नीचाश्रयोहि महतामपमानहेतुः ।

सूत्र—[1]किसीको अपना शत्रु या अपनेको किसीका शत्रु न बताना चाहिये । भेद पाकर दुर्जन लोग शत्रुताको और भी पुष्ट कर देते हैं ॥ ६२ ॥ [2]स्वामीकी नाराजी भी गोपनीय होती है क्योंकि वही दोष उसमें है ॥ ६३ ॥ सुखार्थी मनुष्यको लोकमें मध्यम वृत्तिसे रहना चाहिये ॥ ६४ ॥ अपने आपको सदा याद रखना चाहिये ॥ ६५ ॥ वस्त्र, माला और पादत्राण दूसरेके काममें आये हुए धारण करना निषिद्ध है ॥ ६६ ॥ किया ही पड़ा है समझकर कामकी बेगोल करना ठीक नहीं जो करना है उसे शीघ्र कर लेना उचित है ६७ ॥

---

१ न कश्चिदात्मनः शत्रुं नात्मानं कस्यचिद्रिपुम् । २ प्रकाशयेन्नापमानं न च निस्नेहतां प्रभोः । वाग्भट. अ. २।२७ ।

विनय और विश्वास १०

सूत्र—जैसे विनयसे योग्यताकी पूर्ति होती है एवं अविनय अधूरे-पनका परिचायक है॥ ६८॥

तर्क वैज्ञानिकोंने स्थिर किया है कि वृद्ध शक्तिको सामने आते देख कर तरुण शक्ति उसके प्रभावसे आक्रान्त होती है। जब वह विनय नमस्कार आदि शिष्टाचारकी पद्धतिके अनुसार वृद्ध शक्तिको मान देती है मानों स्वयं उसके भावि दुष्प्रभावसे बचनेका प्रयत्न करती है। काका, मामा, श्वशुर, गुरु, पुरोहित आदि अवस्थामें छोटे हों तो भी वृद्धोंकी तरह माननीय होते हैं। एवं उनकी स्त्रियां भी वैसे हीं पूज्य होती हैं। विनय यह अमोघ शस्त्र है। विनयके गुण यहीं खिल उठते हैं। पोस मास्तर गोविन्द रावके पास एक पूर्विया भैया १०—१० रुप-योंके दो मनियांडरी फॉर्म लेकर पहुंचा। जब एक मनियांडरकी रसीद लेकर दूसरेका फॉर्म देने लगा मास्तरने सहज इतना कह दिया कि दोनों फार्म एक ही वार क्यौं न रख दिये जो एक साथ रसीद काट दी जाती। इतने पर रामभरोसेका मिजाज ठिकाने न रहा। वह कलहभरी आकृतिसे बाबूकी ओर निहार कर कहने लगा तुमका सरकार नौकरी काहेका देत है? वचन सुनते हीं बाबूने लिया हुआ दूसरा फार्म यौं कहकर बाहर फेंक दिया कि जा फिर्याद कर? रामभरोसे उंगलियोंकी रेखा गिनने लगे। अन्तमें यौं कह कर घर गये कि सार परमेसुर हमार

कपारमें मेल नहीं लिखा ? दूसरे दिन मराठी स्कूलका एक १५ वर्षका लड़का उसी तरह ५-५ रु. के दो मनियांडर लेकर डाकखानेमें गया । जब एक मनियांडरकी रसीद लेकर दूसरेका फॉर्म देने लगा मास्तरने लड़केसे भी वही प्रश्न किया । परंतु वह लड़का परम सदाचारी श्रीयुत केशवराव हेड़मास्तरके हाथके नीचे रहा हुआ था । जिसको खानगी तौरपर नित्य विनय विवेक शमदम बल विज्ञान आदिकी शिक्षा दी जाती थी । उसने कुछ भी उत्तर न देकर अपनी गर्दन नीची कर ली । और मास्तरने अपना कर्तव्य पालन कर दूसरी रसीद भी उसके हवाले की ।

सूत्र—योग्य पुरुषोंके साथ द्वेष करना ठीक नहीं वे यदि रुष्ट हों तो अपने विनयसे उन्हें मनाना चाहिये ॥ ६९ ॥

योग्य पुरुषोंको अपने हाथसे आसन देना, प्राञ्जलि होकर सामने बैठना, मुख चक्षु कर्ण नासिका आदिका योग देकर बात सुनना और जब वे जाने लगें कुछ दूर पीछे जाना चाहिये ।

सूत्र—जहां अपूज्य पूजन और पूज्योंका तिरस्कार होता है वहां अधर्मकी संधिमें दुर्भिक्ष, भय, मरण आदि उत्पन्न होते हैं ॥ ७० ॥

जब दान दक्षिणा पुरोहिती पाधाई आदि धर्मसरिता वंशपरंपराके घिरावसे घिर गयी और देशको जीवनदान करनेवाले विद्याद्रि नीरस पड़ गये, एक ओर दुर्भिक्ष महामारी नाना कमजोरियोंने देशको जर्जरित बना दिया, दूसरी ओर डिम्भके साथ

---

१ अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूज्यानां च व्यतिक्रमः । त्रीणि तत्र भविष्यन्ति दुर्भिक्षं मरणं भयम् । नीतिः

धर्मकी भी हजामत होने लगी । इसलिए यजमान वर्गको चाहिये "गुणाः पूजाः स्थानं" का पक्ष ग्रहण कर धर्मोन्नतिके कार्यमें सहयोग दान दें ।

सूत्र—अग्नि लगाने, विष देने, और मारनेके लिए शस्त्र उठानेवाला, एवं क्षेत्र, धन, और दारापहारी ये ६ आततायीके नामसे प्रसिद्ध हैं ॥ ७१॥ आततायीके सामने विनय पालन करना निषिद्ध है ।७२।

आततायीकी हत्या हत्या नहीं वह क्रोधसे क्रोधकी लड़ाई है । दैत्योंका पक्ष लेकर जब बालखिल्य नामके ऋषिगण लड़नेके लिए देवताओंपर चढ़ आये तब इन्द्रने बृहस्पतिसे पूछा क्या करना चाहिये ? देव गुरुने उत्तर दिया मारनेवालेको मारना । चाहे वह कोई हो ।

(विश्वास)

सूत्र—जैसे सबका विश्वास करना ठीक नहीं एवं किसीका भी विश्वास न करना यह भी नीति ठीक नहीं है ॥ ७३ ॥

कभी कभी विश्वास पात्र भी विश्वासघात करते दीखते हैं । कभी शत्रु भी विश्वास योग्य बन जाते हैं । चम्पारण्यके किसी महान् वटपर मौका देख सैर सपट्टा करनेवाले चूहेने जब ऊपर उलूक (घू घू) नीचे नकुल और मध्यमें जालमें फसे हुए मार्जारको देखा तब तीनों शत्रुओंमेंसे अपने प्राण बचानेके लिए बिलावको विश्वास योग्य माना । वह जाल काट देनेका वचन बिड़ालको देकर तत्काल उसकी गोदमें कूद पड़ा । भक्षक बिलावने भक्ष्य

भूत चूहेको गुरुपुत्रकी तरह स्वागत कर गोदमें बिठा लिया। चतुर चूहा कालकी प्रतीक्षा करता बड़ी देर तक जालके साथ निकम्मी कटाकट करता रहा। जब जाल फैलानेवाला आया और बिलावको फंसा देखकर पकड़नेके लिए वृक्ष पर चढ़ने लगा कि चूहेने ऐसे बहुमूल्य समय पर जालको काटा जिसमें सबको अपनी २ राह मापनेके सिवा दूसरा कुछ नहीं सूझता था। फिर मार्जारने मूषकका नमाला कर जानेके लिए दोस्तीके नातेसे एक मासपर्यन्त उसके बिलपर पैरवाई की परंतु चतुर चूहेने कभी उसका विश्वास नहीं किया इत्यादि।

मार्ग चङ्क्रमण ११

सूत्र–हाथमें छत्र छड़ी, पावोंमें जोड़ा, और शरीर पर शिष्ट चित वेषवाना धारण कर मनुष्यको सीधे मार्गसे चलना चाहिये ॥७४॥

दृष्टिको प्रमादपूर्वक इधर उधर चञ्चल न कर अनिष्टसे बचते और इष्टसे योग्य संबन्ध जोड़ते मनुष्यको मार्गका चङ्क्रमण करना चाहिये। उर्दूमें कहावत है कि **राहेरास्त बिरो-गर्चे दूरस्त** अर्थात् राह चलना अच्छा चाहे दूर पड़े। हिन्दू धर्मका भी ऐसाही सिद्धान्त है।

सूत्र–अन्धा बहरा लंगड़ा स्त्री गौ और राजा ब्राह्मण आदिमान्य पुरुषोंको सामने आते देखकर मार्ग देना उचित है॥७५॥वट पिप्पल देवस्थान चतुष्पथ और सुलक्षण पदार्थोंको मार्गमें दाक्षिणकी ओर लेना श्रेष्ठ है॥ ७६॥ मध्याह्न, प्रदोष और अर्धरात्रिके समय

श्मशान चतुष्पथ आदि पर खड़े होनेकी मनाई है ॥ ७७ ॥ मार्गमें साधारण श्रेणीके मनुष्योंमें पुरुषोंसे काका, बावा, भाई, बेटा और स्त्रियोंसे मा, बहिन, बेटी आदिका व्यवहार रखना प्रशस्त है॥७८॥ अपने कामको गमाकर मार्गमें अटकजाना मार्गके सदाचारीका दोष है ॥ ७९ ॥

अनजान मनुष्योंके साथ उनके दिये हुए लोभादिमें आकार कहींका कहीं न चला जाना चाहिये । नाना प्रकारके फैल फितूर रचनेवाले अनेक माया मारीच अपना दांव पेंच गांठते मेला मंन्दिर धर्मशाला बजारके अड्डे और मुशाफर खाना आदि सार्वजनिक स्थानोंपर चक्कर लगाया करते हैं । अनेक घरोंके चिराग उनके दुष्कृत्योंसे गुल हो चुके हैं ।

सूत्र—प्रदोषकालमें सदा गृह पर रहना चाहिये ॥ ८० ॥

एक तो उस समयका गमन निषिद्ध है । दूसरे रात्रिदिनमें एक काल मनुष्यको ऐसा भी अवश्य रखना चाहिये जिसमें वह निश्चय गृहपर मिला करे ।

सूत्र—सर्व जीवों पर दया, यथा शक्ति उपकार, मनका दमन और परमार्थमें स्वार्थ संक्षेपतः संपूर्ण सदाचार इतनेमें आ जाता है ॥ ८१ ॥

उपकार १२

सूत्र—उपकार धर्म स्वतन्त्र है ॥ ८२ ॥

मनु महाभारतादिमें जिन चार धर्मोंको स्वतन्त्र कहा है।

---

१ सदाचारः स्मृतिर्वेदा त्रिविधं धर्मलक्षणम् । चतुर्थमर्थमित्याहुः कवयो धर्मलक्षणम् । महा भा. शान्ति. रा. । नोपकारात्परं पुण्यं नापकारादघं परम् ।

उनमें एक उपकार है। जैसे वैदिकधर्म यज्ञ यागादिका अनुष्ठान करनेवाला अन्य धर्मोंका अनुष्ठान करे चाहे न करे। और जैसे स्मार्त धर्म लोक व्यवहारव्यवस्थाका पालन करनेवाला अन्य धर्मोंके पालन न पालन करनेमें स्वतन्त्र है। क्योंकि लौकिक व्यवहारके पालन करनेपर लोककी जबाबदारी पूरी हो जाती है। जैसे सदाचार अर्थात् सत्पुरुषोंकी रूढि यह धर्म स्वतन्त्र है। उसी तरह उपकार धर्म स्वतन्त्र है। सावधानतासे उपकार धर्मका पालन करनेवाला और कुछ करे वा न करे। उसके लिए उपकार ही सब कुछ है। फिर भी जैसे स्मार्तधर्म वैदिकधर्मका अङ्ग है और सदाचार श्रौतस्मार्त धर्मोंके अङ्ग हैं एवं उपकार यह पृथक् होने पर भी सदाचारधर्मका अङ्ग है। इस लिए सदाचार कुक्षिमें उसका समावेश किया जाता है। आप्त पुरुषोंके वचनोंमें जहां तहां ऐसे वचन मिलते हैं कि उपकारसे बढ़कर कोई पुण्य नहीं और अपकारसे बड़ा कोई पाप नहीं इत्यादि। उपकारको यदि दान और दयामें अन्तर्भाव करें तो **त्रयो धर्मस्कन्धा यज्ञो दानं तपश्चेति** आदि वैदिक वचनोंके अनुसार उपकार धर्मका स्तम्भ ठहरता है।

जो मनुष्य सर्व धर्मोंका अनुष्ठान करता हुआ भी उपकारी नहीं बनता, स्वर्ग लोक प्राप्त होने पर भी स्वर्गीय भोग प्राप्त होनेमें उसके लिए संदेह है। परंतु जो दृढतासे उपकारव्रतका पालन करता है उसके लिए स्वर्गीय सर्व भोग सुरक्षित रहते हैं।

जब श्रीरामचन्द्रजी शम्बूकका वधकर महात्मा अगस्त्यके आश्रम पर पहुंचे, अगस्त्यने राजसत्कार इस नातेसे एक बड़े अद्भुत कण्ठाभरणसे उनका सन्मान किया। श्रीरामभद्रने उसकी महर्घता और विचित्रता पर आश्चर्य प्रकट कर जब उसके बाबत पूछताछकी तब अगस्त्य ऋषिने कहा कि, एक रोज मैं फल, पुष्प, समिधा आदि लानेके लिए वनमें भ्रमण कर रहा था। वहां किसी जलाशयके किनारे एक दिव्यदर्शन पुरुषको शव (मुर्दा) भक्षण करते हुए देखा। जब पूछा तब उसने उत्तर दिया कि मैं प्रथम एक राजा था। सम्यक् रीतिसे लोक रक्षा करने पर देवताओंने मुजको स्वर्गमें वास दिया परंतु स्वर्गीय भोग नहीं दिखाये। जब मैंने पूछा तब उन्होंने उत्तर दिया कि और सब काम तैंने अच्छे किये परंतु परोपकार तुझसे नहीं बन आया। इसलिए यहां तेरे लिए भोग सामग्रीकी व्यवस्था नहीं है। तू जिस जलाशयके किनारे अपना तपस्वी देह छोड़ कर आया है नित्य वहीं जाया कर और अपने मृतशरीरको खाकर जीया कर, जो देवताओंकी शक्ति प्रभावसे दुर्गन्ध रहित ज्योंका त्यों तुझे मिला करेगा। स्वर्गीय पुरुषने कहा मैं इस कर्मसे घृणा करता हुआ उपकार साधनके लिए नित्य किसी योग्य अतिथिकी प्रतीक्षा किया करता हूं। आज आप अनायास मिल गये इसलिए यह कण्ठभूषण अंगीकार कर मुझे इस कर्मसे मुक्त कीजिये। अगस्त्यजीने कहा यह वही कण्ठाभरण है। हे राम जैसे रत्नकी शोभा काञ्चनसे होती है एवं आज आप

योग्य पात्र इसको मिल गये और हमारा प्रतिग्रह करना सफल हो गया। इत्यादि अनेक प्रमाण और दृष्टान्तोंसे उपकारकी लोकोत्तरता प्रसिद्ध है।

सूत्र-तृण, भूमि, जल और वाणीसे दरिद्र संसारमें कोई नहीं और नहीं तो इनसे तो दूसरोंका मान करना चाहिये ॥ ८३ ॥

भक्ति श्रद्धासे तृण अर्पणकर अनेक अकिंचन स्वर्गको पधार गये हैं। प्यासेको पानी और शरणागतको आदर देकर अनेक योग्य गृहस्थ स्वर्गीय भोग भोगते हैं। और न सही मीठे वचनोंके प्रभावसे कितने ही धर्मज्ञ स्वर्गको गये और अब तक लौट कर नहीं आये हैं।

सूत्र-सदाचारी, संतोषी, विद्याचरणसंपन्न, गृहस्थब्राह्मण दानका पात्र है ॥ ८४ ॥

मनुजीका कथन है कि ऐसा ब्राह्मण जिस दिन मिल जाय उस दिन श्राद्ध करनेसे पितरोंकी अक्षय्य तृप्ति होती है।

सूत्र—विद्याव्रतहीन ब्राह्मण दानका अधिकारी नहीं है ॥ ८५ ॥

महर्षि अत्रि कहते हैं कि ऐसे नाम मात्रके ब्राह्मणोंको भिक्षा दान करनेवाले गृहस्थ मानों चोरोंको भात खिलाते हैं। क्योंकि अविद्याके कारण वे धर्मरक्षणमें तो भाग ले नहीं सकते। प्रत्युत मूर्खताके पक्षपाती बनकर विद्यावानोंसे विरोधके द्वारा समाजके घटी यन्त्रको बिगाड़नेका काम उनसे हो सकता है। तस्मात् दानका देना लेना बड़ी जवाबदारीका काम है। विदित हो कि भूखे अशक्त

प्राणियोंको अन्नदान करनेका यह सूत्र निषेध नहीं करता । दानसे आलसी अकर्मण्य मनुष्योंके बढ़ानेकी यह मनाई करता है ।

भारतके प्रसिद्ध प्रसिद्ध तीर्थ और नगरोंमें आज लक्षावधि रुपयोंका दैनिक खर्च होता है । परंतु उससे अपढ़, आलसी, व्यसनी, प्राणियोंको जितना लाभ होता है दानके योग्य पात्रोंको उतना हो नहीं रहा है । यदि दान धर्मके व्यवस्थापक लोग दानार्थधनका मुख संस्कृत विद्या और हिन्दू धर्मकी रक्षा की ओर फिरादें तो ऋषि संप्रदायके उद्धारमें बड़ी भारी सहायता मिल सके । सर्व फिजूलखर्चियोंको रोक कर एक धर्मफण्ड खोला जाय । अनाथ विद्यार्थी और विधवाओंके लिए जैसे उससे सहायताकी व्यवस्था की जाय एवं अच्छे अच्छे धर्मशास्त्री धर्मका प्रचार करते देशमें घूमा करें । प्राज्ञ, विशारद, शास्त्री, आचार्य, तीर्थ, आदि संस्कृत परीक्षाओंमें उत्तीर्ण विद्वानोंकी मानव्यवस्था होनेसे धर्मार्थ धनकी सफलता हो सकती है। और एक बड़ी भारी त्रुटि उससे दूर हो जाय । परंतु यह होगा तभी जब मानतृष्णा और अन्ध रूढियोंसे विरक्त हो धनिक लोग ऐसा करना स्वीकार करेंगे । एक श्रीमान् मरते समय पंचोंके समक्ष व्यवस्था कर गया कि मेरे धनका सदावर्त अमुक नगरके अमुक मार्गपर दिया जाय । नियम बना उस समय उस मार्गपर यात्रियोंकी भारी भीड़ होती थी । परंतु रेल्वे लाइनके निकल जाने पर जब वहां मनुष्यका दर्शन भी दुर्लभ हो गया । पंच यों कहकर वहीं उस दानकी विधि

पूरी करते रहे कि मालिक कह गया था इसी मार्ग पर सदावर्त रहे इत्यादि। यों जब तक लोग विवेकसे काम न लेंगे दानमें सुधार होना कठिन है।

सहानुभूति और सङ्घसुख १२

सूत्र-[1]श्रेष्ठसे प्रसन्नता, समानसे संतोष और हीनसे सहानुभूति रखनेवाला मनुष्य संकटमें नहीं पड़ता॥ ८६॥

कौरव कुलका सर्वनाश इसीसे हुआ था कि उनका प्रमुख दुर्योधन अपनेसे जेष्ठ श्रेष्ठ महाराज युधिष्ठिरका वैभव देखकर जला करता था। संसारके इतिहाससे आर्य जातिकी स्वतन्त्रता कदापि लुप्त न होती यदि कुलकलंक जयचन्द अपने वीर साथी महाराज पृथिवीराज चौहानके साथ दगा न करता तो। श्रेष्ठता और समानताके दृष्टान्त हो गये। सहानुभूति पर अभी कल उस महानगरीमें एक विचित्र घटना हो चुकी है। ५—७ श्रीमन्त किसी खास जगह पर बैठे नाना प्रकारके मेवा मिष्टान्नों पर हाथ मार रहे थे। कुछ याचकोंने विनयके साथ प्रार्थनाकी कुछ हमको भी दिया जाय। इस पर श्रीमन्तोंके स्टेट सेक्रेटरीने जवानीके जोसमें उतर दिया कि "दरिद्रैः प्रवर्तितो दान धर्मः नवयं दास्यामः" अर्थात् दानकी बातें दरिद्रोंने बनायी हैं हम कुछ न देंगे। इस पर नगर भरके भिक्षुकोंमें आजीविकाकी चिन्ता पर सनसनी फैल गयी।

---

१ गुणाधिकान्मुदं लिप्से दनुक्रोशं गुणधामात्। मैत्रीं समानादन्विच्छेन्न-तापैरभि भूयते। नीतिः

उन्होंने माण्डलिक पञ्चायती द्वारा ठहराव पास किया कि मिल कर श्रीमन्तों पर हमला किया जाय । ज्योंही भिक्षुकोंका भयंकर दल नगरकी ओर टूट कर पड़ा श्रीमन्तोंने अधर्म अधर्मका आक्रोश करते हुए दयाकी प्रार्थना की । भिक्षुकोंने उत्तर दिया दुर्बलैः प्रवर्तितो दयाधर्मः न वयं दयिष्यामः । अर्थात् दयाकी बातें कायरोंने बनायी हैं हम उन्हें न मानेंगे जब श्रीमन्तोंने उस दिनके स्टेट सेक्रेटरीके वचनों पर क्षमा मांगकर उनके चरणोंमें यथाशक्ति हिरण्यगर्भ दक्षिणाञ्जलि समर्पणकी उन्होंने भी खेद प्रकट कर दया धर्मको मान लिया । इसलिए प्रत्येक अवस्थामें प्रत्येक मनुष्यको दूसरोंके साथ सहानुभूति रखना चाहिये ।

सूत्र--सङ्घसुख तबतक किसी जातिको प्राप्त नहीं होता जबतक उसके सामञ्जस्य घटक अवयवोंमें एकता न होगी ॥ ८७ ॥

सङ्घसुख भी एक अजब सुख है ! इसको नास्तिक आस्तिक पृथिवी की सर्व जातियां मानती हैं । सङ्घसुखके लिए ग्राम नगरोंकी रचना, सङ्घसुखके लिए राज्यस्थापन और सङ्घसुखके लिए व्यापार धन्धे आदि चलाये गये हैं । जब यज्ञ, दान, तप, अनुष्ठान आदि उन्नतिके किसी साधनमे कला नहीं रहती उस समय सङ्घसुखमें भगवान्‌की कला बास किया करती है । धर्मानुसारी सङ्घसुख है कि सङ्घसुखानुसारी धर्म है ? जब इस प्रश्न पर विचार करते हैं तब दोनोंका अन्योऽन्याश्रय मिलता है । सङ्घ सुखके पीछे धर्म है । क्योंकि मनुजीने अ. १ श्लो. ८६ में लिखा है कि

कृतयुगमें तपस्या धर्म था। त्रेतामें ज्ञान। द्वापरमें यज्ञ और कलिमें दान अर्थात् उपकार धर्म है। यदि धर्मानुसारी संघसुख होता तो धर्म व्यवस्थाको युगानुसार बदलनेकी जरूरत क्यों होती? एवं धर्मकी अक्षुण्णता बनी रहने पर भी संघसुखके विघातक छिद्रोंको उत्पन्न होनेका अवसर नहीं मिलता। नहि जाग्रति ग्रामे चोराः प्रविशन्ति अर्थात् जगते हुए ग्राममें चोर नहीं घुसा करते। भारत धर्मके आद्याचार्योंने संघसुखके लिए ही एक वैदिकधर्म और एक संस्कृत भाषाको आसेतु हिमाचलं, आद्वारकं चटगांव पर्यन्त एक दिन स्थापन किया था आज फिर उसकी आवश्यकता हो चली है।

कुलाचार और का पुरुष १४

सूत्र-ऋत्विक्, पुरोहित, आचार्य, माता, पिता, मातुल, भगिनीपति, बहिन, भाई, स्त्री, पुत्र, कन्या, ज्ञाति, सम्बन्धी, बान्धव, कुलस्त्री, अतिथि, वैद्य, ऋणदाता, बाल, वृद्ध, रोगी, और दास वर्गके साथ विवाद करना मना है॥ ८८॥

स्प०—गृहमें न्यारे न्यारे नातेसे रहनेवाले सर्व मनुष्योंमें सब पर मालकी उसकी होती है जो वय और पदसे बड़ा हो। पिताके मरने पर माता मालक। माताके बाद बड़ा भाई स्वतन्त्र और सब परतन्त्र रहते हैं। स्त्री पुत्र नौकर ये तबतक स्वतन्त्र होकर कोई काम

---

१ ऋत्विक्पुरोहिताचार्यैर्मातुलातिथिसंश्रितैः। वृद्धबालातुरैर्वैद्यैर्ज्ञाति संम्बधिबान्धवैः। मातापितृभ्यां जामीभिः भ्रात्रा पुत्रेण भार्यया॥ दुहित्रा दासवर्गेण विवादं न समाचरेत्। शांन्ति प. अ. २४३। १४। १५

नहीं कर सकते जबतक उन पर सत्ता चलानेवाले उन्हें आज्ञा न दे दें। पिता प्रजापतिका रूप, माता वसुन्धरा देवी, आचार्य ब्रह्मदेव, बड़ा भाई इन्द्र, स्त्री श्री, बड़ी बहिन और भोजायी मातृ-समान, छोटी बहिन भोजायी और पुत्री दयाका अवतार एवं नौकर चाकर भी पुत्रवत् अनुकम्पनीय और पालनीय हैं। ऐसी सनातन धर्म व्यवस्था है। पुत्रवान् गृहस्थको काका और भाइयोंके प्रसंगमें रहते हुए उनकी योग्यतापर हमेशा ध्यान रखना चाहिये। मेघनादका पक्षलेकर रावणने जिस प्रकार भ्राता विभीषणका अपमान किया था, सुख चाहनेवाले गृहस्थको भाइयोंके साथ वैसा व्यवहार कदापि न करना चाहिये। चार भाइयोंमें एकके पुत्र होने पर सबको शास्त्रने पुत्रवन्त माना है। एवं एक स्त्रीके पुत्र होने पर सर्व स्त्रियां पुत्रवती हो जाती हैं।

गृहका जमा खर्च और भोजनादि गृहके प्रधान कार्योंमें धर्मके आज्ञाकारोंने स्त्रियोंको नियुक्त करनेकी आज्ञा दी है। सासके सामने निकम्मी हंसी हंसना, तकिया लगाना पानदानी पीकदानी आदि रखना, अतर तैल आदि लगाना, सौभाग्यवती स्त्रियोंके लिए मना है। माता पिताओंके जीवित रहते भाई भाईका अलग होना ठीक नहीं। फिर भी सीर निभे वहांतक अच्छा, जब न्यारे न्यारे हों तो छोटी मोटी चीजोंपर विवाद न कर उदा-रता पूर्वक अलग होना चाहिये। नौकरकी छोटी मोटी भूलोंको

मालक माफ कर दिया करते हैं। मालकोंकी छोटी मोटी आज्ञाओंका नौकर तिरस्कार नहीं करते। यदि फिर भी गृहमें कलह हो तो उसे युक्तिसे बन्द करना बड़ोका काम है। यह नहीं कि बड़ेने बड़ा मूसल उठाया। अनेक भाई अपनी इस गुरु नीतिको नही जानते इससे घरोंमें जब तब लीलाताण्डव हुआ करते है। और उनमे कुछ सुधरने नहीं पाते।

सूत्र--आचार्यसे उपाध्याय दश गुण श्रेष्ठ, उपाध्यायसे पिता और पितासे माता दश दश गुण श्रेष्ठ हैं ॥ ८९ ॥ अथवा संपूर्ण पृथिवीसे माता बड़ी हैं सुखार्थी गृहस्थको कीसी भी हालतमें माता पिताओंसे विरोध न करना चाहिये ॥ ९० ॥

किसी गुरुतर अपराधसे स्त्रीपर नाराज हो गोतम नामके किसी ब्राह्मणने पुत्र चिरकारीको आज्ञा दी कि इस रांड़को अभी जानसे मार डाल ? यों जब पुत्रको आज्ञा देकर पिता आश्रमसे बाहर हुए चिरकारी विचारने लगा बड़ाही संकटका विषय है अब क्या करूं ? एक ओर पिताकी आज्ञा दूसरी ओर माताकी हत्त्या। यों उभयतः पाशारज्जूमें आज मैं फस गया। थोड़ी देरबाद उसने विचार किया कि माता पिताओंके गुणोंकी गणना करके देखूं विशेष महत्व किसमें है ? पिता पालन करता है। विद्या पढ़ाता है। सभा समाज आदिमें साथ रखता है। भलाई चाहता है। उपनयन विवाह आदि संस्कार करता है। और अन्तमें सर्व

---

१ दशाचार्यानुपाध्यायः उपाध्यायान्पितादश। दशचैव पितृन्माता सर्वांवा पृथिवीमपि ॥ गौरवेणाभि भवति नहि मातृसमो गुरुः म. आनु. १०५

संपत्तिकी मालकी पुत्रको दे जाता है । इत्यादि । माता गर्भमें धारण करती है । कष्ट सहकर रक्षा करती है । पुत्रके लिए कटु उपचार करती है । जब कोई अपमान करता है मान देती है । प्रिय पुत्रके लिए प्राण देती है । उसकी मलिनतासे प्यार करती है । सौवर्षका पुत्र भी माताके सामने दो वर्ष कासा होता है । माताके बिना यह पिण्ड न हो । पिण्ड न हो तो संसार न हो । दीन दुखियारे भी माताके अनिर्वचनीय सुख सहारेसे सर्व सुख संपन्न बने रहते हैं माता न हो तो कुछ भी नहो । यौंजब उसने विचार किया तब पिताकी अपेक्षा मातामें गुण अधिक मिले । उसने कहा कदापि माता मारनेके योग्य नहीं है । उसके अपराध तत्वोंपर विचार करते हुए पुत्रने कहा यदि पुरुष दोषयुक्त न हो तो स्त्रियां कदापि दूषित न हों । इस लिए स्त्रियां जहां दूषित होती हैं वहां पुरुष अपराधी हैं । इत्यादि । यौं सोच विचार करते जब उसको दीर्घकाल बीत गया तब उधर गोतमकी भी मति ठीकाने आयी । उसने सोचा स्त्रीको मरा डाला यह काम तो खोटा किया । एक तो स्त्री हत्या महापाप, दूसरे स्त्री गृहमें रहती तो अनेक बात थी । गृह खुला हुआ था । संतानों पर संतान होती थी । उनके विवाह आदि करते । लोकमें स्नेह सम्बन्ध बढता, स्त्री दुराचारिणी थी तो भी उसके पीछे संसार था । अब क्या रह गया ? धिक् जीवन । सोचके मारे एकवार गोतमने आत्म हत्या करना चाहा परंतु पुत्रकी विचारशीलतापर विश्वासकर आश्रमकी ओर दौड़ा

१० विश्वा बहाल स्त्रीको और शोकमग्न पुत्रको देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ। वह पुत्रको कन्धेपर उठाकर नांचने लगा और उसकी बड़ाईयोंपर बड़ाई करने लगा। तस्मात् पुत्रादिको माता पिताओंके विरुद्ध कभी कोई अकार्यकरण चेष्टा न करना चाहिये।

सूत्र—बड़े भाईके कुंवारे रहते छोटोंके विवाहसे छोटा परिवेत्ता और बड़ा परिवित्ती कहाता है॥ ९१॥

परिवेत्ता परिवित्ती कन्या पिता, वर पिता और पुरोहित ये सर्व ऐसे विवाहके प्रसंगसे पतित हो जाते हैं। परंतु बड़े भाईमें किसी तरहका ऐव न हो तब।

सूत्र—संतान विक्रय पाप है॥ ९२॥

इसीसे धर्मशास्त्रोंमें सर्वत्र उसका निषेध मिलता है।

सूत्र-वंशमें सात पुरुषोंतक सपिण्डता और १० तक समानोदक भावका नाता रहता है॥ ९३॥ पुत्रपौत्र स्त्री भ्राता भ्रातृपुत्र दत्तकपुत्र आदि पूर्व २ के न रहनेपर पिछले प्रेतकर्मके अधिकारी होते हैं॥ ९४॥

सूत्र—मन घड़न्त दोषोंसे परायी प्रतिष्ठापर धक्का पहुंचानेवाले काकबुद्धि कापुरुषको महाभारतके वृद्धपितामह भीष्मने वर्णसंकर कहा है॥ ९५॥

जो सभा समाज आदिमें शेखीका मारा किसीके अनहुए चरित्रोंको इसलिए बनाकर प्रकट करे कि दोषी ठरने पर वह अपमानित

१ निषेकं विपरीतं स आचष्टे वृत्तसेवया। मयूर इव कौपीनं नृत्यं संदर्शयन्निव।- महाभा. शां. स. ११४।१०

हो जायगा । जो पराये छिद्रोंपर कालयापन कर तेरीसी मेरे और मेरीसी तेरे सामने करता समाजकी सुखशान्तिमें बाधा पहुंचाता है । वह मानों दूसरोंपर दोषारोपणकर्मके मिससे अपनी कुजाति प्रकट करता है । जैसे मयूर नृत्यकरते समय मनमें समझता है मैं बहुत अच्छा परंतु वह अधम यौ नहीं विचारता कि इस नृत्य-कलाके साथ ही साथ लोग मेरे गुह्य प्रदेशकी ओर भी देखते हैं एवं कापुरुष सत्पुरुषोंको कलङ्कित कर मनमें खुसी मानता है परंतु वह नीच यौं नहीं सोचता कि इससे मेरी ही कुजाति प्रकट होती है । इसके सिवा का पुरुष और भी हैं । जो गरीबोंको शरण-दोऽस्मि, शरण दोऽस्मि कह कर घोर अन्धकारमें लेजा कर लूटें । अपने कोढयुक्त अङ्गोंपर कस्तूरी तिलक लगा कर यह दिखानेकी चेष्टा करें कि मैं बड़ा सुन्दर । जो माता पिताओंको त्याग दें । अथवा उन पर प्रहार करें । हितैषी प्राणपोषक पुरुषोंके साथ समय पर कृतघ्नता प्रदर्शित करें । जमानेकी खोटोंको अपनी ओट बना कर लोकमें उद्धत काकनीतिसे वर्तें इत्यादि । एक दुर्नाम दुश्चरित्र दूसरोंका छिद्रान्वेषण कर आजीविका किया करता था । संसार भरके कुलक्षणी कापुरुषोंमें जितने दुर्गुण होने चाहियें सब उसमें थे इसलिए खास तौरसे वह गुण्डोंके औघड़ घाटका वस्ताद समझा जाता था । देखनेमें सज्जन दीखता परंतु जब नंगाई पर आता कहता हम दूसरेके सिरकी उतारनेके लिए अपना सिर नंगा रखते हैं । कोतवाल हमारा दोस्त है । चपरासी प्यादे सब हमसे पलते हैं । अखाड़े

वाले सब चेला चांटी हैं । बड़े बड़े वकीलोंसे मैं मिला रहता हूं ।
न जाने कितने नशेबाजोंका नशा मैंने खेलका पानी और
जेलकी हवा खिला कर उतारा है । आज तो बंदेने वह इज्जत
पा रक्खी है कि ग्रामके मनुष्योंमें चाहूं उसको सदाचारी दुराचारी
सिद्ध कर सकता हूं । इत्यादि । सचमुचमें नादमें आनेके बाद
जो काम लखनौके गुंण्डे और बनारसके पण्डे भी एकाएक नहीं
कर सकें वह दुश्चरित्र उसे कर डालता था । नंगाईसे प्रभुता
जमा कर अनेक श्रीमन्तोंसे उसने बड़ी बड़ी वार्षिक देनगियां
इस लिए प्राप्त कर ली कि तुम्हारी प्रतिष्ठामें कभी किसी तरहकी
खामी नहीं आने पावेगी । बुरायेसे बचकर इस नीतिको लेकर
अनेक सद्गृहस्थ उसके गुर्रानेपर सेवाञ्जलि धरने लगे । ज्यौं ज्यौं
हरामका माल मिलने लगा दुर्नामका मन बढ़ने लगा । एक वार
किसी चिरप्रतिष्ठित गृहस्थको चिढ़ानेके लिए उसने किसी कविके
पावोंपर एक चन्द्रमणि रखकर एक भ्रष्ट गीतावलि बनवाथी ।
जब छपानेका प्रश्न सामने आया ज्ञातिसुधारके कोलाहलमें चन्दा
इकट्ठा कर किसी घनकच्चरके नामसे छपवा डाली । वह ४
वदमासोंको लगा कर जब तक उस खानदान गृहस्थकी निन्दाके
गीत नहीं गवा सका, कभी भरपेट नींद नहीं सोया । कुछ लोगोंने
भले आदमीको भी उभारा परंतु उसने कहा जो ऊपरकी ओर
मुख करके थूकेगा थूक उसी पर पड़ेगा । इत्यादि एक वार
साहसी दुश्चरित्र तहसीलदारका घोड़ा चुरवानेकी साजिसमें

पकड़ा गया । जब मामला चला उसके सर्व कुकर्म्मोंका घड़ा फूटा—विना भाड़ेका घर तो देखना पड़ा ही जब उसकी उत्पत्तिका पता लगाया गया चर्मकारसे तंबोलिनका दूध निकला ।

ज्ञानतीर्थका यात्री १५

सूत्र—सब तीर्थोंमें ज्ञानतीर्थ श्रेष्ठ है ॥ ९६ ॥

जलतीर्थ यात्री जन्मभर जड़तीर्थ करता रहा । ज्ञानतीर्थके उपासकने गुरु गृहमें रह कर ज्ञान बढ़ाया । जब तब जड़तीर्थ यात्रीकी भी बसतीमें प्रशंसा होती रही कि बड़ा धर्मात्मा है बड़ा आस्तिक है इत्यादि । परंतु समाजमें घड़ी दो घड़ी वाहवाहके सिवा उस प्रशंसाका विशेष असर नहीं पड़ता था । इधर ज्ञानतीर्थके यात्रीकी स्थायी ज्ञानकलाका विकाश ज्यौं ज्यौं प्रकाशके रूपमें बदलने लगा एक रोज ज्ञानतीर्थ यात्रीका विजय हुआ । पूर्व कालमें जो लोग यौं ज्ञानतीर्थकी यात्रा कर चुकते वे ही बुढापेमें फिर निर्वेद, विविक्त सेवा आदिकी इच्छा कर जल-तीर्थ यात्री बनते थे । जो गृहस्थ निर्मोही होनेकी इच्छासे गृहादि छोड़ तीर्थयात्रा करते वे फिर मोह पंकमें डूबनेकी इच्छा नहीं करते थे । तिस पर आज तीर्थस्नायी विशुद्ध्यति आदि शास्त्रीय शब्दोंका मन माना अर्थ कर सर्व साधारण जिस प्रकार अपनी मलिनतासे तीर्थस्थ जल वायु आदिको दूषित करते हैं । और उसके जो जो परिणाम होते हैं उन्हें देखते

यह कह सकते हैं कि सर्व तीर्थोंसे ज्ञानतीर्थ श्रेष्ठ है। अनेक गृहस्थ यों कह कह कर अपने जीवनमें अन्याय, दगाबाजी आदि पापकर्म किया करते हैं कि पैसा होगा तो तीर्थ करेंगे। यदि वे न्याय और सत्यके साथ रह कर घरोंहीमें बैठे बैठे अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवंतिका आदिका ध्यान कर लिया करें तो क्या उन्हें फल न हो? प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये जो रेलको दिये जाते हैं यदि जड़ तीर्थोंकी ओरसे बचाकर ज्ञानतीर्थोंकी ओर लगाये जायं तो देशका परम कल्याण हो।

जब कि तू विज्ञानको अपनायगा
जान निश्चय तीर्थको अपनायगा
ज्ञानसे तू शून्य होगा जिस घड़ी
तीर्थ तेरे व्यर्थ होंगे उस घड़ी।

धर्मशास्त्री और तर्कशास्त्री १६

सूत्र—परम्परा प्रसिद्ध धर्मका केवलतर्कशास्त्र प्रतिपक्षी नहीं हो सकता॥१७॥

एक धर्मशास्त्री किसी सभामें माताका उपकार मान? पिताका उपकार मान? गुरुका उपकार मान? आदि उपदेश दे रहा था बाजूमेंसे किसी तर्क शास्त्रीने मुह निकाल कर कहा माता पिताने पुत्रकी उत्पत्तिमें उपकार बुद्धिसे कोई काम नहीं किया। रजो

१ नैषा तर्केण मतिरापनेया। नाचिकेतोपनिषद्।

वेगसे मोहित हो पशु पक्षियोंकी तरह मनुष्य प्राणी भी आमोद प्रमोद आदि करता है। कुदरत सबको उत्पन्न करती है। इत्यादि। उपकार न मानने पर यदि पुत्रादिको पाप हो तो पशु पक्षियोंकी योनिमें भी हो क्योंकि हेतु समान है।

धर्मशास्त्रीनें उत्तर दिया माता पिताओंके हृदयमें पुत्र वासना प्रथम ही से रहती है इसलिए पुत्र होता है। तर्क शास्त्रीने कहा यदि वासना पुत्र सच्चा हो तो वन्ध्याको भी पुत्र होना चाहिये क्योंकि इच्छा और प्रयत्न समान हैं। धर्म शास्त्रीने कहा वहां पूर्वसंचित कर्म किंवा प्रयत्नकी शिथिलता आदि अन्य कई कारण प्रतिबन्धक हो जाते हैं। तार्किकने कहा इसमें क्या प्रमाण है? धर्म शास्त्रीनें कहा वेद प्रमाण है। तार्किकने पूछा वेदकी सत्यतामें क्या प्रमाण है? ध. ने उत्तर दिया परम्परा प्रमाण है। उसने पूछा परम्परामें क्या प्रमाण है?। धर्मशास्त्रीने उत्तर दिया परम्परा गंगा प्रवाह-वत् स्वतःसिद्ध है। जैसे इस प्रकारकी कर्कश तर्कोंसे धर्मशास्त्रीने माता पिताओंके उपकार धर्मको नहीं छोड़ा। एवं शुष्कतर्क जालमें पड़ कर अपने स्वाभाविक धर्मोंको न छोड़ना चाहिये।

संसारमें जितने धर्म हैं सब विश्वासकी भित्तिपर खड़े हुए हैं। मुसलमानोंका कयामतका दिन कौन प्रत्यक्ष देख आय है?। इशाईयोंके आदम हव्वा आदिसे किसने मुलाकात ली है? एवं ईश्वर परलोक पुनर्जन्म पैतृकाचार आदि आर्यजातिके अनेक धर्म अदृष्ट फल विशेषके पड़देसे ढके हुए है। वृद्ध परम्परा और शास्त्रके

बलसे वे धर्म धर्म यों पुकारे जाते हैं । एक धर्मकी सत्तामें सुखासीन समाजमें धर्म विरोधकी अग्नि सुलगाना छोटा पाप नहीं है । धर्म निर्णयका पक्ष तो एक कोनेमें धरा रह जाता है और उससे मतभेदमें पड़नेसे समाजकी एकता छिन्नभिन्न हो जाती है । दूसरोंका खाना झपटकर आप महाप्रसाद उड़ानेवाले वायसरायोंकी उस समयमें खूब बन आती है । वे वीरता पूर्वक नहीं, बड़े सन्मानसे उनमें प्रविष्ट हो अपनी मार्कटी नीतिसे सबको अपना नमाला बना लेते हैं । धर्म विरोधके समय यदि उन कुलकलंकोंको अपने कियेका फल न मिले तो भी अन्तमें धर्म एव हतो हन्ति यह मनु भगवान्का कथन उनके सामने आ जाता है । इसलिए समाजमें धर्म विरोधकी व्याधि फैलना ठीक नहीं ।

आर्यधर्मके सिद्धान्त जितने ही गहन हैं उतने ही वे आज मूढ़ जनताके अस्ति नास्तिके विषय भी हो रहे हैं । धोखा देकर जाति वृद्धि करनेवाले विधर्मियोंको अपनी खिचड़ी पकानेका अच्छा मौका मिल जाता है । कुछ दिन हुए देहलीके चांदनी चौकमें एक कर्कतर्कशास्त्री कह रहे थे कि पृथिवी शेषके सिर पर है तो शेष किसके सिर पर है ? वह खाता क्या है ? पीता क्या है ? रहता कहां है ? उसके बापका नाम क्या है ? मा कौन थी ? किसकी बेटी थी ? इत्यादि । किसी पुराणमें बैलको भी पृथिवीका धारक बताया है । उसका शरीर किस धातुका है ? कितना लम्बा चौड़ा है ? कहां रहता है ? उसके चारेका प्रबन्ध किस कंपनीके हाथमें

है ? गोबरके कण्डे किस विलायतमें विकनेको जाते हैं ? इत्यादि । इस प्रकार भूसुरका भूतासुर कर बिना राह रीतिको जाने अनेक मारीच हिन्दू धर्मके पीछे पड़ जाते हैं। और अज्ञानकी बलिहारीसे अनेक भोंदूनाथ उनका पृष्ट पोषण करनेपर उतर पड़ते हैं । तत्वत: देखा जाय तो जहां तत्वान्वेषी अधिकारी है, वहां शेष माने ईश्वरीय सामर्थ्य पृथिवीका धारक है । सर्पका अलंकार इसलिए बताया गया है कि जहां अधिकारी उपासक किंवा प्रेक्षकरूपमें है वहा प्रेक्ष्य कोटिका देवता है इत्यादि । ऐसी ही बात बैल पृथिवीकी है । निघण्टु अ. २–६ में गो (बैल) नाम सूर्यक भी है । सूर्य अपनी आकर्षणशक्तिसे पृथिवीका धारक है' इस बातको इस समयके ज्योतिषी और वैज्ञानिक भी मानते हैं । यों रहस्य रूपमें स्थित हिन्दू धर्मके सिद्धान्तोंको जाने बिना उन पर आक्रमण करना वैसी ही मूर्खता है जैसी दिवालसे सिर टकराने पर अन्धेका दिवालको गालियां देना है । हिन्दूधर्मकी रचना विज्ञानके उस महान् प्रासाद पर हुई है जिस पर समासीन होने वालेको संसारका गुप्त, प्रकट सर्व दृश्य दिखायी दे और वह किसीको भी न दिखायी दे । इसके अनुसार देवचरित्र मुनि-चरित्र आदिके नामसे आर्य शास्त्रमें संभव असंभव नाना प्रकारकी बातें मिलती हैं । हरएक कथाका कोई न कोई तात्पर्य अवश्य है । जब तक उनकी स्थितिस्थापनाका सामर्थ्य प्राप्त न हो शुष्क तर्क शास्त्री न बन कर उनके कहे हुए सदाचारमात्रका पालन करते रहना

चाहिये। परंतु खेद है कि इस धारणाके बिना देशमें अनेकानेक मत मतान्तर चल पड़े हैं जिन्हे एक सूत्रमें गठन करना आज महा कठिन काम हो गया है।

आपद्धर्म १७

सूत्र—आप्तजन आपत्कालमें जिस धर्मसे वर्ताव करें उसे आपद्धर्म कहते हैं॥ ९८॥

ब्राह्मणके आजीविकार्थ यज्ञ कराना, विद्या पढ़ाना, दान लेना आदि धर्म हैं इसलिए निर्वाह न हो तो वह ज्ञान संरक्षणार्थ शूद्रादिसे भी दान ले सकता है। मनुजीने अ. १० श्लो. १०२ से ११० तक अनेक हेतु दृष्टान्तोंसे सिद्ध किया है कि आपत्तिमें ब्राह्मण बने वैसे आत्मरक्षण कर सकता है। पवित्र वस्तु अपवित्र होती है ऐसा न्यायतः सिद्ध नहीं होता। जब शूद्रादिसे भी सहायता न मिले क्षत्रिय अथवा वैश्यवृत्तिसे भी ब्राह्मण निर्वाह कर सकता है। भेद इतना है कि वह लवण, तैल, दूध आदि रसोंका विक्रय न करे।

एवं क्षत्रिय आपत्ति कालमें वैश्यके कर्म खेती, वाणिज्य, पशु-पालन, आदिसे जीवन निर्वाह कर सकता है। किन्तु तैल, लवण, दूध, दही, घृत, मद्य, नील, लाख, आदि पदार्थोंका विक्रय कदापि न करना चाहिये। मनुजी कहते हैं कि वैश्यवृत्तिसे क्षत्रिय आपत्ति कालमें आजीविका कर सकता है परंतु ब्राह्मणवृत्ति दान लेना यह क्षत्रियका किसी भी हालतमें धर्म नहीं है।

वैश्य भी आपत्तिमें शस्त्रधारण, कलाकौशल, शिल्प आदि कर्मोंसे जीवनकी रक्षा कर सकता है। उच्छिष्टभक्षण अथवा दान लेना यह वैश्यका किसी भी अवस्थामें धर्म नहीं है। जो वैश्य मोहके वस हो दान सहायता आदिके तौर पर दूसरोंसे धन लेता है वह स्वयं और देनेवाला दोनों पतित हो जाते हैं। दूसरोंसे धन मांग कर यज्ञ या अन्य धर्मकार्य करना भी वैश्यके पतितत्वका हेतु है। दाताके पाप दोष अपने ऊपर लेकर सुधार करनेवाला कीचड़में पांव देकर धोनेवालेकी तरह वृथा परिश्रम उठाता है। हजार धोने पर भी वह शुद्ध नहीं होता। और अंतमें पुत्र कुल बान्धवोंसहित नरकमें पड़ता है। शुद्र आपात्तिकालमें वैश्य कर्म कर आजीविका कर सकता है। दही दूध घृत तैल लवण आदिका विक्रय करनेसे शूद्र पतित नहीं होता।

महर्षियोंने आपत्ति कालमें नाना उपायोंका आलम्बन कर देह रक्षाकी है। और अपनी संतानोंके लिए भी उन्होंने आपत्ति कालमें वैसे ही उपदेश किये हैं किन्तु संकट निकल जाने पर अपने धर्म पर प्रत्येक जातिको पहुंच जाना चाहिये।

सदाचारमें अनाचार १८

सूत्र—निषिद्धाचरणका नाम अनाचार है॥९९॥

पानीमें मूतना। पड़े पड़े खाना। भोजनके समय क्रोध करना। स्त्रियोंसे झगड़ना। बालकोंकी दोस्ती। व्यर्थकी हंसी। पतितकी

सेवा। गधेकी सवारी। जप अनुष्ठानमें बातें। श्मशानमें तमाखू। जलमें स्वरूप देखना। रजस्वला गमन। स्त्रीके साथ भोजन। छुप कर शृंगार देखना। नग्न होकर स्नान करना। अग्निमें पांव तपाना। प्रदोष कालमें भोजन, गमन, निद्रा, स्त्रीप्रसंग। जलमें भ्रष्ट वस्तु डालना। किंवा थूकना। सोतेको जगाना। पापिष्ठ ग्राममें रहना। महामारीके समय न भगना। अञ्जलिसे जल पीना। फूटे वर्तनमें भोजन करना। कांशीके पात्रमें पांव धोना। बालसूर्य। प्रेतधूम। फटा हुआ आसन। टूटी खटिया। बिना द्वार किसीके गृहमें घुसना। नग्नशयन। दोनों हाथोंसे सिर खुजाना। दूसरेके काममें आये हुए वस्त्र, जूते, जनेऊ, माला, आदिको धारण करना। रामलीला राशलीलाओंमें धर्मविरुद्ध लावनां टप्पे उडाना। इन्द्रधनुष दिखाना। दूसरेका अन्नजल खाती पीती गौको बताना। शयनकालमें शिरस्थानकी ओर पांव और पावोंकी ओर शिर करना। भोजनके बाद जलशुद्धि न करना। पुस्तकको थूक लगाना। सिस्पेन् लिफाफोंपर जीभ लगाना। प्रसूता गाय भैंसका १० दिन प्रथम दूध पीना। वर्षाकालमें दौड़ना। व्यर्थ वाचालता करना। झूंठी साक्षी देना। मिथ्या शपथ खाना। रात्रिमें स्नान किंवा दही भक्षण करना। चाहे जिससे लड़मरना। विवाहादि पुष्टि कार्योंमें श्मशान किंवा देवस्थानके फल पुष्प ले जाना। नंगे सिर शौच फराकत जाना। सिर बांधकर जीमना।

और कालमें बातें करना । मांगकर लायी वस्तु वापस न देना । परायी वस्तुको अपनी बताना । शक्तिसे बाहर खर्चा करना । कन्याविक्रय अभक्ष्यभक्षण । अपेयपान । अकार्यकरण आदि निषिद्ध कर्म अनाचारके नामसे प्रसिद्ध हैं । सदाचारी गृहस्थको अनाचारी कर्म कदापि न करना चाहिये ।

शुद्धाऽशुद्धि स्पर्शाऽस्पर्श १९

देश, काल, द्रव्य, मान, और कार्यका गौरव लाघव देखकर समाजमें शुद्धाशुद्धि स्पर्शास्पर्श आदिकी व्यवस्था की गयी है ॥ १०० ॥

मनु अ. ५ श्लोक १२७ से शुद्धाशुद्धि आदि पर विचार करते हुए लिखते हैं कि देवताओंने तीन चीजोंको हमेशा पवित्र माना है । एक जिसकी अशुद्धता ज्ञात नहीं । दुसरी जो शङ्का होने पर जलसे शुद्ध कर ली जाय, और जिसकी आप्तजन वचनोंसे प्रशंशा करें । जितने जलसे एक गोकी प्यास शान्त हो यदि शुद्ध भूमि पर पड़ा हो, तो वह शुद्ध होता है । किंतु अशुद्ध वस्तुका संसर्ग न हुआ हो, और दुर्गन्धित तथा वर्ण रस विपरीत न हो तबतक । बोलते समयमें मुखसे निकले हुए थूकके कण, परछांहीं, गाय, घोड़ा, मक्खी, और सूर्यकी किरण धूलि, पृथिवी, पवन, अग्नि आदि पदार्थ, अपवित्र वस्तुका स्पर्श करने पर भी पवित्र ही रहते हैं । अन्यको जल पिलाते समय यदि मुखसे उच्छिष्ट जलकण, पिलाने वालेके पावोंपर पड़ें तो वह अशुद्ध

नहीं होता। श्मश्रू (मूंछके बाल) यदि मुखमें जायं तो भी मनुष्य अशुद्ध नहीं होता और दांतोंमें रहे हुए अन्नसे भी अशुद्ध नहीं होता है।

याज्ञवल्क्य स्मृति अ. १ श्लो. १९४ में लिखा है कि अजा पुत्र, और घोड़ेका मुख, शुद्ध परंतु गौका मुख अशुद्ध होता है। अत्रि स्मृति अ. ३-श्लो. १८८ के अनुसार, गोशाला, भड़भूजा हलवाईकी दुकान, तेलकी घानी, स्त्री और रोगी मनुष्यमें शुद्धताका विशेष विचार न करना चाहिये। एवं मल मूत्र आदिसे नदीजल, और अपवित्र वस्तु डालनेसे अग्नि, अशुद्ध नहीं होती। गौ देहनेकापात्र, चाम की मोटका जल, यन्त्र द्वारा निकाला गया अथवा खानिका पानी, बढ़ई, लुहार, सुनार, चित्रकार, तथा स्त्री बालक और वृद्धोंका स्पर्श किया गया किंवा अज्ञात अवस्थामें पड़ा हुआ जल शुद्ध होता है। इससे नलके पानीकी शुद्धता प्रकट होती है। बहुतसे मनुष्योंमें दो एक अशुद्धोंके अस्पृश्य होनेसे सब अस्पृश्य नहीं होते।

दही, घृत और शहतका भाण्ड जैसे शुद्ध रहते, हैं एवं बिलाव यज्ञपात्र पवन आदि सदा शुद्ध होते हैं। शरीर शय्या वस्त्र स्त्री। संतान और कमण्डलु ये सब अपने ही शुद्ध होते हैं। भोजनगृहसे बचे हुए घृत तेल आदि चिकने पदार्थ अशुद्ध नहीं होते।

पान ऊख फल तैल घृत उबटन मधुपर्क ये सब धर्मतः

१ गोदोहने चर्मपुटे च तोयं यन्त्राकरे कारुक शिल्पि हस्ते। स्त्रीबालवृद्धाचरितानि यान्यप्रत्यक्षदृष्टानि शुचीनि तानि। अत्रि, २२८।

पवित्र माने गये हैं। दीपक और आसनकी छाया, शय्या, कपासके पेड़की दतोन, बकरीकी धूलिका स्पर्श ये अलक्ष्मी कर हैं। प्रसूता स्त्री गौ भैंस बकरी और नवीन पानी ये १० दिनमें शुद्ध होते हैं। बोधायन स्मृति प्र. २ अ. ३ श्लो. ६१ लिखा है कि झाड़ू, कुत्ता, बकरी, भेड़ गधा, और वस्त्रोंकी गर्द अशुद्ध होती है। अत्रिस्मृति अ. ३ श्लो. २४ में लिखा हैं कांजी दूध भुजाहुआ अन्न, दही सत्तू और घृत, तेलसे पके हुए अन्नके पदार्थ, मठा इनको शूद्रके हाथसे लेकर भोजन करनेमें भी दोष नहीं है। व्यास स्मृति अ. ३ श्लो. १२८ में लिखा है कि द्विजोंको गाय भैंसके सिवा अन्य पशुका दूध न पीना चाहिये। मनु. अ. ५ श्लो. ११२–११३ में लिखा है कि झूंठा न लगा हो ऐसा सुवर्णपात्र सींपकापात्र पत्थरका वर्तन और रेखा रहित चांदीकापात्र धोनेसे शुद्ध होता है। तामेका पात्र भस्मसे. लोहका खटाईसे, कांशीका भस्म, और जलसे एवं सीसेका पात्र धोनेसे शुद्ध होता है। झाड़ूसे, जल छिड़क देनेसे, लेपसे, छीलनेसे, और गौके निवाससे भूमि शुद्ध होती है। पक्षियोंके जूठेको गौके सूंघे हुए को पैरसे छूएं गये को और जिस पर छींकको बूंदें पड़ गयी हों, किंवा केश कृमि आदिसे दूषित हो गया हो, ऐसे अन्नादिको पवित्र स्थानकी किंचित् मृत्तिका स्पर्श करा देनेसे शुद्ध हो जाता है। पराशर स्मृति अध्याय ७ श्लो. ३० में लिखा है कि शण, मूंजकी वस्तु, फल, चर्म, तृण, काष्ट, सूर्प (छाज) और रस्सी ये

जलसे शुद्ध होती हैं। रूई आदिके तकिये तथा रंगीले वस्त्र ये सब धूपमें रखनेसे शुद्ध होते हैं। आसन शय्या सवारी नाव तृण आदि, कुत्ते चाण्डाल आदिसे स्पर्श किये जाने पर भी अशुद्ध नहीं होते। इससे रेल यात्राकी शुद्धिका पता लगता है। याज्ञवल्क्य स्मृति अं० १ श्लो. १९३ में लिखती है कि चोर आदि यदि बलात्कारसे स्त्रीको अपवित्र करें तो वह अशुद्ध नहीं होती। सिर्फ ऋतुकाल तक उसे दूर रखना चाहिये।

बहुतसे मनुष्योंमें दो एकके अशुद्ध रहनेसे सब अशुद्ध नहीं होते। देवयात्रा विवाह यज्ञ और उत्सवादिके समय स्पर्शास्पर्शका दोष नहीं माना जाता है। इत्यादि।

सदाचारसे संबन्ध होनेके कारण अशौच प्रकरण पर भी कुछ लिखना था परंतु पृथक् लेख निकालनेके इरादेसे यहां उसका विचार स्थगित रक्खा गया है। इति शम्।

गीति

संगीत–जयदेव ! दयानिधि ! सदय हृदय ! भगवन्
निगम सुगम जगदीश, खग मृग अवनीशा !
विश्वपते ! भुवनगतेः भक्तरते ! दाशरथे !
रघुनायक दुर्धर शायकधर भगवन् । जयदेव० १
शिवसदना ! शशिवदना ! रिपुकदना ! मनमदना !
भवविघ्नविनाशन ! गरुड़ासन ! भगवन् । जय० २
कुमत हरो, सुमत करो, विश्ववरो, भुवनभरो,
मुनिमान्य ! मनोहर ! ललितचरित ! भगवन् । जय०३
राम हरे, श्याम हरे, रूप हरे, भूप हरे,
सुखधाम हरे ! गुणग्राम हरे ! भगवन् । जयदेव० ४

कवाली

श्रीकृष्ण चन्द्र ! राखो भगवान् टेक मेरी ।
असहायके सहायी, व्रजभूमिके कन्हाई ।
भारतके भारवाही, देरी कहां लगायी ।
कातर पुकार करता, कैसे हुई अंधेरी । श्रीकृष्ण० १
गोविंद ! तुम गुनी हो, मोहन ! महामुनी हो ।
केशव ! बड़े कवी हो, राजीवके रवी हो ।
संसार गा रहा है, गीता सुकीर्ति तेरी । श्रीकृष्ण० २
उपकारकी कथामें, मेरा पता नहीं है ।
सत्कर्म धर्म मध्ये, कुछ भी सधा नहीं है ।
करुणा निधान ! तेरी, आशा मुझे घनेरी । श्रीकृष्ण ३

उसदीन द्रौपदीको, तूने प्रभो ! बचाया ।
प्रल्हादके लिये था, जल्लादको खपाया ।
चरणारविन्द तेरे, मेरी बड़ी कचेरी । श्रीकृष्ण० ४

बड़ोंकी वाणी

आर्या

मान बड़ोंका रक्खो, सचको भक्खो सुधारको चक्खो ।
गुण अवगुणको लक्खो, बोल वृथा बात पैठको न रक्खो १
मनमानी मत बक्को, माल पराया हराम मत डक्को ।
रक्खो हिसाब पक्को, पैसा खर्चो कमाय कर टक्को २
पन्थबुरे मत चल्लो, करके हिल्लो कुटुम्बको पल्लो ।
परधन देख न जल्लो, मुट्ठी खिल्ली गरीबको डल्लो ३
बनकर रहो न खट्टे, मनके मेटो खरासके चट्टे ।
दूध सरीखे फट्टे, खून खटाई कहो कहां डट्टे । ४
अज्ञानसे न अकड़ो, मनको सतकी लगामसे पकड़ो ।
खावो गमको टुकड़ो, पूंछ गधेका न भूलकर पकड़ो । ५
मत काहूको छेड़ो, होय बखेड़ो खराब हो बेड़ो ।
अपनी आप नमेड़ो दरबारोंमें कपालमत फोड़ो ६

भारतमाताका संदेश

चाल हाथरासियोंकी

दोहा—भक्त जुटे दुर्जन हटे, कटे पापके फन्द
भारतके नवशीस पर उदय हुए शतचन्द ।

नये नगरमें नवीन बिजली एका एक जल जाती है
रंगभवनकी सुरंग खिड़की उसी समय खुल जाती है
कोमल पाणि चिबुक पर धरकर अम्बा वचन सुनाती है
सावधान हो सुजन मण्डली जहां तहां जम जाती है।
सभासद् गौर लगावो, प्रथम आलस्य हटावो।
दया भारत पर लावो, जो जो कहे विश्वजननी तुम सो सो
कर दिखलावो। १

दोहा–अपने अपने कर्म पर, सब जीवनको ध्यान
भार वहन खर करत हैं; गृह रखवारत श्वान।
गृह रखवारत श्वान, गाय घरभरको दूध पिलाती है।
बाहर चारा चरत दूधके समय ठिकाने आती है।
कर्म सूत्रसे बंधी भामिनी पतिके गृहपर जाती है।
मर्यादापूर्वक गृहसेवा करके वह मर जाती है
वेगके काज तुरंगी, ठानमें लगत सुरंगी।
कोलि करती मातङ्गी, विरले आती काम खर्च है देखो
उसका जङ्गी। २

दोहा–अनल जलत पानी द्रवत, निशदिन बहत समीर।
सावधान सब दिन रहत, पुरुष पराक्रमधीर
पुरुष पराक्रमधीर वीर नर, नारायण कहलाता है
करे आजका आज नहीं वह, कलकी बात बनाता है।
कर्मवीर व्यसनोंसे वर्जित, देशकालका ज्ञाता है।
नहीं किसीसे वैर मित्रता, पथ अपनेपर जाता है।

वहुत सुन थोड़ा वोले, अर्थको सहज टिटोले
वात अनुभवसे तोले, नहीं किसीके उचितकाममें निंदा
विषको घोले। ३

दोहा—पुरुषार्थको पुरुषका, पहला लक्षण जान।
विन पुरुषार्थ पुरुष है, जड़ पाषाण समान।
जड़ पाषाण समान भाग्य भी, उसके काम न आता है।
जूतेसाहित पांवधर सिरपर, चाहे सो चढ़ जाता है।
नहीं नहीं पाषाण खंड भी, वनकर देव पुजाता है।
दृढ़ पाषाणयुक्त घरवाला, चोरोंसे वच जाता है॥
दौड़ा—भला जल वल कर मरना, नहीं कायरता करना।
वृथा काहेको डरना, होनी हो सो हो अनीतिको सव
प्रकारसे हरना० ४

दोहा—डर कुछ वस्तु है नहीं, वह है मनकी हार
एक हारकी हारसे सव अपना संसार
सव अपना संसार हार जो कुछ भी चीज कहाती तो
कैसे कहो महा सागरपर नाव चलायी जाती तो
चित्र विचित्र विश्वकी रचना, जो डरसे डर जाती तो।
निराधार धरणी धीरज विन, पानीमें मिल जाती तो।
कर्मको कण्ठ लगावो, जातिको जल्द जगावो।
देशका कष्ट मिटावो, विना कष्ट आराम कहां है सो तुम
हमे वतावो०। ५

दोहा—पावन वचन सुनायकर, श्रीमति भारत मात ।
देखतही गायब हुई, वह सूरत वह गात ?
वह सूरत वह गात मातका, जब आंखों पर आता है
धीरज बल विज्ञान धर्मका, सुख प्रभात हो जाता है
सब कुछ छोड़ मातृ सेवामें, मन मतंग रुक जाता है
दिव्य पराक्रम, प्रचण्ड साहस, पाकरके छिक जाता है
वचन वे बड़े करारे, हृदयके वेधन हारे ।
हरो सब दोष तुम्हारे, भर दो गहरा तेल दिवेमें खेलो
खेल हमारे । ६

कवाली—

वस अब न धैर्य होगा, अति काल हो चुका है
आंखें तनीक खोलो, मुखसे जराक बोलो ।
मेरी दशा टिटोलो, वस अब न धैर्य होगा । अतिकाल० हो १
विश्वास पर अड़ा हूं, दरबारमें पड़ा हूं ।
कर जोरकर खड़ा हूं, वस अब न धैर्य होगा । अति०हो २
तनको तपा रहा हूं, मनको मना रहा हूं ।
तुमको सुना रहा हूं, वस अब न धैर्य होगा । अति० हो० ३
औदास्यको हटा दो, चिन्ता चिता मिटादो ।
टुक रामरस चटा दो, वस अब न धैर्य होगा । ४

सूचना

देशकी सद्यः परिस्थितिकी ओर देखकर हमने एक ऐसी "सदाचार ग्रन्थमाला" नामकी माला निकालना आरम्भ किया है, जो देशमें चरित्रशीलता विस्तारित करनेका उद्योग करेगी। आजका गृह जीवन सदाचार सम्बन्धी शिक्षाके बिना जिस प्रकार निकृष्ट श्रेणीका बन गया है, और अपने स्वतःके अपराधसे जिस प्रकार अनेक गृहस्थ सांसारिक सुखोंसे वञ्चित रहकर भाग्यको दोष दिया करते हैं। धर्म, स्वास्थ्य और नीतिसम्बन्धी विविधप्रमाणोंके आधारसे माला उनपर प्रकाश डालेगी। सदाचारमाला बालक बालिकाओंको पवित्राचरणकी शिक्षा देगी। नवयुवकोंके हृदयमें धर्माभिमानकी ज्योति जागृत करेगी। शान्तिकामुक गृहस्थवर्गको शान्ति प्रदान करेगी। अशिक्षित गृहिणी वर्गको गृहिणीचरित्र सिखायगी। आलसियोंको कर्मशील बनायगी। संस्कृत साहित्य सिन्धुके नाना गूढ़रत्नोंको प्रकाशमें लाकर हिन्दीभाषाकी सेवा करेगी। हजारहों रुपये खर्चनेके योग्य व्याधियोंको सदाचारके चुटकलोंसे दमन करनेका उपदेश देगी। एवं अन्यान्य आवश्यक प्रकरणोपयोगी विषयोंपर विचार कर समाजको सन्मार्ग दिखानेका प्रयत्न करेगी। इसलिए प्रत्येक गृहस्थको मालाकी पुस्तकें अपने गृहमें रखना चाहिये।

श्रीकृष्णके ३६ गुण राष्ट्रीयगीति, 'ऋतुचर्या गृहिणीचरित्र' आदि ४—५ लेख इस समय छप रहे हैं जो सज्जन दीपावलीसे प्रथम ग्राहक बनेंगे उन्हें उक्त चार पुस्तकें १।) कीमतमें

दी जायंगी । बाद कीमत २॥) से कम न होगी । इसलिए सदाचार प्रेमी गृहस्थोंको १।) वी. पी भेजकर शीघ्र ग्राहक बन जाना चाहिये ।

धन्यवाद

पूना, सतारा, संगमनेर, लातूर, बागलकोट, बामोरी, सांगली, साहपुर, कराड़, इलकल, जालना, निजामाबाद नांदेड़ पनवेल सायखेड़ भुसावल आदि कतिपय ग्रामोंके सज्जनोंने अपनी प्रसन्नतासे इस कार्यमें यथाशक्य सहायता कर हमारा उत्साह बढ़ाया है । इसलिए उन सज्जनोंको हम सहर्ष धन्यवाद देते हैं ।

निवेदन

अन्याऽन्य सभ्य गृहस्थोंको भी हमारे इस कार्यभागमें सहायक बनकर उत्तेजन देना चाहिये । क्योंकि सदाचार प्रेमी सज्जनोंहीके भरोसे पर हमने यह काम हाथमें लिया है । आरम्भमें हमने बिना मूल्य माला प्रचारका इरादा किया था किंतु बाद श्रीमान् सेठ ताराचंद रामनाथ पूना, श्रीमान् सेठ प्रतापचंदजी अमलनेर, श्रीमान् सेठ बालकिसन गोविंद रामजी संगमनेर, आदिके परामर्शसे वह विचार बदलकर विक्रयके साथ प्रचार करना ही निश्चय किया गया । क्योंकि बिना मूल्य प्राप्त हुई पुस्तकोंको उधर लोग उपेक्षा दृष्टिसे देखकर बराबर पढ़ते नहीं इधर प्राप्त द्रव्यसे मालाका संचालन सुभीतेसे हो सकेगा ।

धर्मार्थ

तिसपर भी अनाथ विद्यार्थिवर्गको मालाके ग्रन्थ मुफ्त देनेमें आयंगे ।

पं. रामनारायण शास्त्री, विद्याप्रचारक संस्था—नासिक सिटी.

शुद्धिपत्र ।

अशुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	शुद्ध
स्वधर्मो	८	२०	स्वधर्म
निकलस	१२	१९	निकोलस
कांटेकों	१३	२	कांटेको
क्सिी	१४	२०	कीसी
एकधा	१६	१५	एकाथा
अंगेरिका	१६	१८	अमेरिका
वियान्	१६	२१	विद्वान्
पर पर	१७	१०	पर
जितकी	१७	१४	जिनकी
यथेच्छ	१७	१५	यथेच्छ
हाकम	१८	१३	हकिम
यीं	१८	१५	यों
क्यीं	१८	१६	क्यों
रूकेगा	१८	१८	रुकेगा
गर्ममे	१८	१९	गर्भमे
क्यीं	१८	२०	क्यों
क्यीं	१९	६	क्यों
शेप	२०	१४	शेष

अशुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	शुद्ध
छुपाया	२१	१४	छिपाया
अश्वस्थामा	२३	१३	अश्वत्थामा
आप धर्म	२४	२	आपद्धर्म
गपााना	२५	३	गणाना
छुपाना	२८	८	छिपाना
राक्षसोंको	२८	१५	राक्षसको
मूख	३०	३	मुर्ख
चटाषी	३७	९	चटायी
वृक्षसे	३२	६	वीजसे
पड़ा	५५	१	पड़े
क्यौं	७०	२१	क्यों
यौं	७४	८	यों
चेला	७७	१	चले

कई कारणोंसे संशोधनमें टाइप संबन्धी त्रुटियां और और भी रह गयी हैं। पाठक-उन्हे सुधार कर पढ़ें। अगले संस्करणमें संशोधनपर पूरा पूरा ध्यान दिया जायगा।

पुस्तक मिलनेके पते

१ पं. रामनारायण शास्त्री, विद्या-प्रचारक संस्था, मु. नासिक सिटी।

२ श्रीयुत वल्लभरामजी व्यास नाकड़ा पुजारी, ठि. खोलाटी भाऊजीमंदिर मु. धूलिया, जि. खानदेश।

३ सेठ हजारीमल द्वारकाप्रसादजी (लालीराम गिरधारी लाल) मु.-राईगंज जि. दिनाजपुर।

सूचना—

राष्ट्रीयगीति, गृहिणीचरित्र, श्रीकृष्णके २६ गुण, ऋतुचर्या, आदि पुस्तकें बहुत जल्द प्रकाशित होनेवाली हैं ग्राहकोंको शीघ्र सूचना देकर लाभ उठाना चाहिये।